NRC
NATIONAL REGISTER OF CITIZENS

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

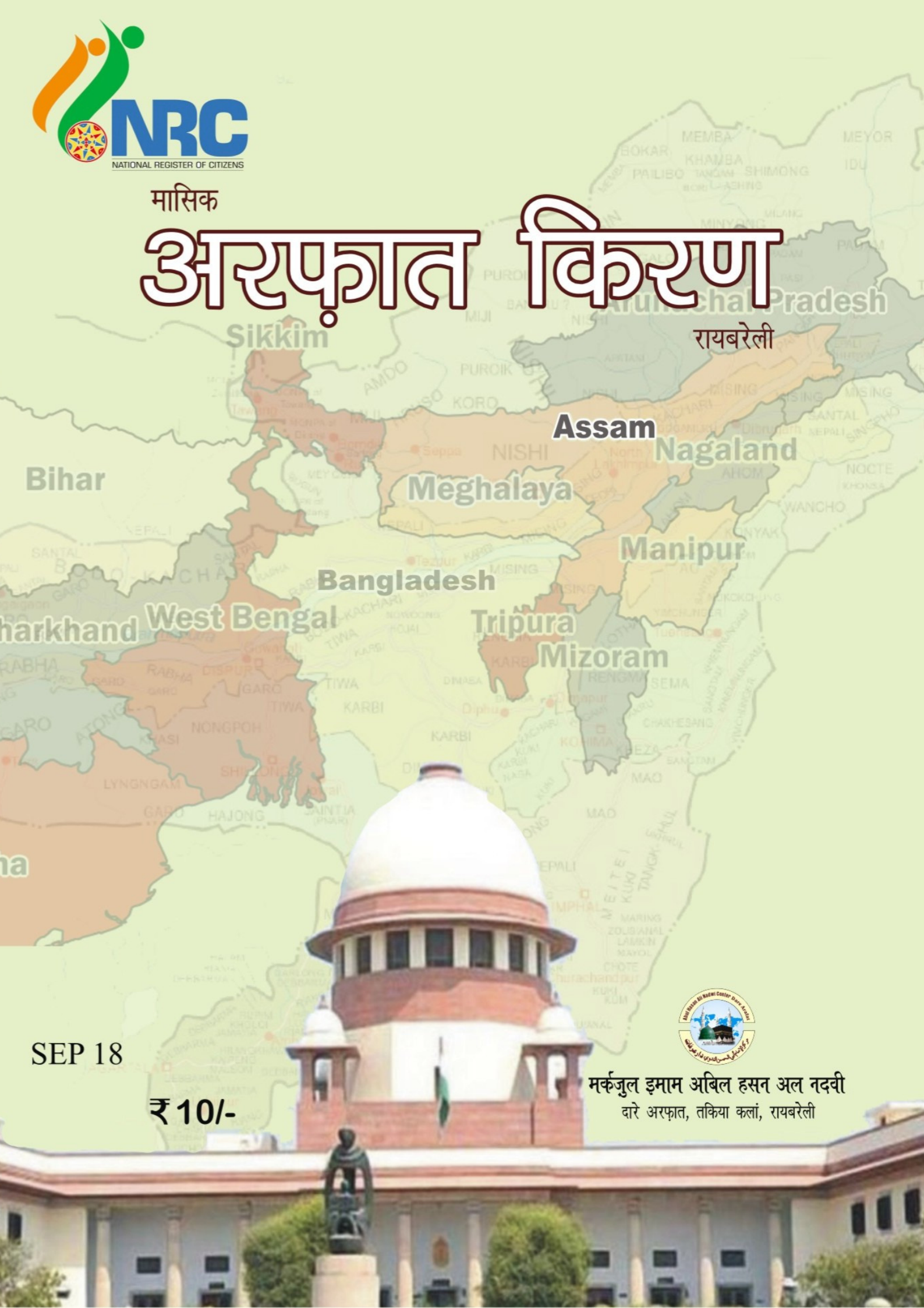

SEP 18

₹ 10/-

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

शौक़-ए-आख़िरत

मुसलमान के लिये कफ़्फ़ारा

''हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने फ़रमाया कि तोहफ़ा (मरगूबा) मुसलमान का मौत है।''

जो बिछड़े हुए गुलाम को उसके शफ़ीक़ व करीम मालिक से मिला दे, उससे बढ़कर तौहफ़ा–ए–मरगूब उसके लिये और क्या हो सकता है? कोई उस पुल से भी भला रूठा, बिगड़ा और बिगड़ा जो सीधा दयारे हबीब तक पहुंचा दे। मोमिन के लिये तो वह घड़ी हक़ीक़ी और इन्तिहाई ख़ुशी की होती है।

''हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने फ़रमाया कि मौत हर मुसलमान (के गुनाहों का) कफ़्फ़ारा है।'' (कि उसकी तकलीफ़ ही से गुनाह माफ़ हो जाते हैं)

और ऐसी दवामें कुछ कड़वाहट भी अगर हो जो बीमारी की शदीद की तल्ख़ियों को ज़ायल कर देने वाली है तो कौन ऐसा है जो उस दवा की नाख़ुशगवारी ही को महसूस करेगा और अल्फ़ाज़ से ऐन ख़ुशनुमा बात न करेगा।

''हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने फ़रमाया कि दुनिया मोमिन का जेलख़ाना और मक़ामे क़हत है (कि वहां राहत और नेमत दोनों कम हैं) तो जब वह दुनिया को छोड़ता है तो जेलख़ाना और मक़ामे क़हत को छोड़ता है, क्योंकि आख़िरत में राहत और नेमत दोनों कामिल हैं।''

क़ैदख़ाना उसको कहते हैं कि राहत और ख़ुशी महदूद, आज़ादी बिल्कुल ही महदूद हो, दुनिया में एक तो राहतें और नेमतें यूं भी बहुत कम और फिर उनके सर्फ़ व इस्तेमाल में भी शरीअत की तरफ़ से तरह–तरह की क़ैदें और पाबन्दियां लगी हुईं। मरते ही आख़िरत की ग़ैर महदूद नेमतों के इस्तेमाल की ग़ैर महदूद आज़ादी मिल जाती है। फिर अगर उसके मुक़ाबले में इस दुनिया को जेलख़ाने का नाम न दिया जाये तो क्या कहा जाये? मौत का वक़्त तो उस क़ैदे उन्सुरी से छूटने और आज़ादी पाने का होता है, न कि किसी मज़ीद क़ैद व बन्द में गिरफ़्तार होने का।

''हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने फ़रमाया कि मौत हर मुसलमान के लिये कफ़्फ़ारा है।''

और कफ़्फ़ारे के माने यह हैं कि उसकी तकलीफ़ से गुनाह माफ़ हो जाते हैं और बरज़ख़ व हश्र में उनकी परशिश व गिरफ़्त का ख़तरा नहीं रह जाता– यह गुनाह जिस तादाद में भी माफ़ हो जायें तो वही नेमत क्या कम हैं, लेकिन बाज़ शारहीन का क़ौल है कि कुल माफ़ हो जाते हैं। जब तो फिर ऐसी नेमत का पूछना ही क्या?

''हज़रत अबू मालिक अश्अरी रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० नु दुआ फ़रमायी है कि इलाही! जो कोई मेरे रसूल होने का एतक़ाद रखता है, मौत उसकी महबूब बना दीजिए।''

लीजिए अब और क्या चाहिये?यह तो साफ़ दुआ रसूलुल्लाह स०अ० की अपने रब से है, फिर मौत से वहशत और परेशानी कैसी?इसे तो मेरी उम्मत में हर एक के हक़ में मरगूब व महबूब बना दीजिए।''

यह तो रसूलुल्लाह स०अ० ने अपने परवरदिगार से अर्ज़ की और अपनी उम्मत से क्या फ़रमाया? उसे भी सुन लीजिए: ''हज़रत अनस रज़ि० से रिवायत है कि रसूलुल्लाह स०अ० ने मुझसे फ़रमाया कि अगर मेरी नसीहत याद रखो तो मौत से बढ़कर कोई चीज़ तुम्हें महबूब न होना चाहिये।'' यह सराहत आपने सुन ली! मौत मोमिन को महबूब क्या माने?महबूब तरीन होना चाहिये!

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह०)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:९ सितम्बर २०१८ ई० वर्ष:१०

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री– दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नारवुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

अत्याचार का स्वभाव.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दीनी सरहदों की हिफ़ाज़त.....३
हज़रत मौताना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

यूरोप की इल्मी व तमद्दुनी बिसात.....५
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

त्याग तथा समानता क्या है?.....७
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नमाज़–ए–जनाज़ा के विभिन्न मसले.....१०
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

पस्ती का कोई हद से गुज़रना देखे.....१४
अज़ीज़ुल हसन सिद्दीक़ी

मुहर्रम के महीने की बिदअते.....१५

अल्लाह का फ़ैसला.....१७
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

आसाम और एन सी आर (NCR).....१८
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

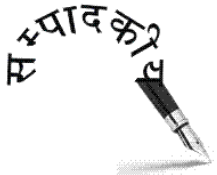

सम्पादकीय

अत्याचार का स्वभाव

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

जब किसी क़ौम का मिज़ाज ज़ुल्म का बन जाता है तो वह क़ौम बहुत दिनों तक बाक़ी नहीं रह सकती। इसी तरह हुकूमतें भी ज़ुल्म के साथ नहीं चल सकतीं। किसी भी देश या समाज के लिये यह बहुत ही ख़तरनाक बीमारी है कि अत्याचार का स्वभाव बन जाए।

भारत की यह विशेषता रही है कि विभिन्न धर्मों के लोग यहा रहे हैं और सबको यहां बढ़ने व उन्नति करने का अवसर प्राप्त हुआ है। धर्म व ज़ात के नाम पर यहां कभी हिंसा नहीं की गयी। मुसलमानों ने यहां लगभग सात सौ साल शासन किया मगर सबको अपने–अपने धर्म पर अमल करने की आज़ादी हासिल रही। धर्म के नाम पर कभी ज़ुल्म नहीं किया गया, यद्यपि जहां कहीं–कुछ हुआ वह शासन–प्रशासन से ग़द्दारी के आधार पर किया गया। कभी धर्म के नाम पर किसी को नहीं मारा गया बल्कि औरंगज़ेब आलमगीर जैसे पेशवा ने हमेशा हिन्दुओं के साथ उदारता पूर्ण व्यवहार किया। जहां कहीं भी उसके किसी क़दम का उल्लेख मिलता है वह सिर्फ़ इस आधार पर है कि हुकूमत के ख़िलाफ़ साज़िश हुई या बग़ावत की कोशिश की गयी तो इसके कुचलने के लिये सख़्त क़दम उठाए गये। हालांकि वह बादशाही का ज़माना था और बादशाह को सारे अधिकार होते थे कि वह जो चाहता करता, उसको रोकने वाला कोई न था।

अजीब बात है कि आज के लोकत्रान्त्रिक भारत में वह बातें सामने आ रही हैं जो उस समय के शाही निज़ाम में न थीं। क़ानून और अदालत के साथ जिस तरह खुले आम खिलवाड़ होने लगा है पहले इसके बारे में सोचा भी न जा सकता था। मीडिया ने अपनी पहचान बिल्कुल खो दी है। और यह शेर बिल्कुल उन पर सच हो रहा है:

ख़िरद का नाम जुनूं रख दिया जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आपका हुस्न करिश्मा साज़ करे

लोगों की आंखों में धूल झोंकी जा रही है, लेकिन हक़ीक़त बदली नहीं जा सकती। एक वर्ग है जिसने हर तरह से मुल्क को बर्बाद करने की ठान ली है। इसका क्या नतीजा निकलेगा, वह वर्ग शायद इस भूल में है कि दुश्मन की कश्ती डूबेगी तो वह अपनेआप को बचा लेगा। वह शायद नहीं जानता कि अगर असाधारण परिस्थितियां पैदा हो गयीं तो ज़िन्दगी मुश्किल हो जाएगी। देश का वह वर्ग जो दबा और कुचला है उसको और दबाने की कोशिश की जा रही है। इसका नतीजा क्या निकलेगा?कहा जाता है "तंग आमद बजंग आमद" घर में एक लड़का बिगड़ जाए तो कई बार पूरे घर की नींद हराम हो जाती है। इस पर ठन्डे दिल से ग़ौर करने की ज़रूरत है और सच्चाई और हक़ीक़त पसंदी के साथ आगे बढ़ने की ज़रूरत है। किसी चीज़ को छिपाने से वह थोड़ी देर के लिये छिप तो सकती है मगर ख़त्म नहीं हो सकती। पानी जब सर से ऊंचा हो जाता है तो हालात संभाले नहीं संभलते हैं।

इस वक़्त बड़ी ज़रूरत है देश के शुभचिन्तकों के आगे आने की और डूबती हुई नैय्या को पार लगाने की। पूरी ईमानदारी के साथ, सच्चाई के साथ। समाज में जो ज़ुल्म का मिज़ाज पैदा किया जा रहा है वह एक नासूर है। अगर यह बढ़ता गया तो लाइलाज हो जाएगा फिर हालात संभाले न संभलेंगे। अन्दर घुसकर हक़ीक़त शनासी पैदा करने की ज़रूरत है।

सिर्फ़ मीडिया की ख़बर पर अगर फ़ैसले होते तो ख़ैर नहीं, ज़रूरत हैं अन्दर घुसकर हक़ीक़त जानने की।

नुक़ूश को तुम न जांचों लोगों से मिल कर देखो
क्या चीज़ जी रही है क्या चीज़ मर रही है।

सर्द–गर्म को जानने की ज़रूरत है। पानी कहां मर रहा है, अगर उन जगहों को बन्द न किया गया तो फिर इमारत का ख़ुदा ही हाफ़िज़ है।

दीनी सरहदों की हिफ़ाज़त

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

"ऐ वह लोगों जो ईमान लाए हो, सब्र से काम लो, सब्र की फ़िज़ा और उसका माहौल पैदा करो, एक–दूसरे को सब्र की तरग़ीब और तलक़ीन करो, और सरहदों की हिफ़ाज़त पर जमे रहो, और अल्लाह को हाज़िर व नाज़िर समझकर काम करो ताकि कामयाब हो।" (सूरह आले इमरानः 200)

इस आयत में जो पहला हुक्म और अव्वलीन ख़िताब है वह यह कि ईमान वालों सब्र से काम लो।

एक ज़बान से कोई लफ़्ज़ जब दूसरी ज़बान में जाता है तो बहुत और वह बहुत लम्बा सफ़र करता है तो वह सफ़र–ए–मकानी भी होता है और ज़मानी भी। यानि वह लफ़्ज़ बहुत दूर से आता है और बहुत दूर तक जाता और लोगों में पहुंचता है तो उसके मायने में कुछ फ़र्क़ आ जाता है। या मायने महदूद हो जाते हैं। पहले वह लफ़्ज़ बहुत वसीअ रक़बे पर मुहीत और ज़िन्दगी के तमाम शोबों पर हावी था लेकिन बाद में वह महदूद होकर रह जाता है। इन अल्फ़ाज़ में सब्र का लफ़्ज़ भी है जिसके साथ थोड़ी सी हक़तलफ़ी हुई लेकिन जिसने सब्र से काम लिया वह यह कि सब्र के माने यह होंगे कि अगर कुछ सदमा पड़े और कोई हादसा पेश आ जाए या कोई तकलीफ़ हो तो ज़ब्त करो। ज़्यादा रो–धो नहीं और अपनी शिकायत न करो। लेकिन अरबी में सब्र के मायने इससे कहीं ज़्यादा वसीअ हैं। सब्र के मायने हैं जम जाना, पुख्ता रहना और मुक़ाबला करना और अपनी जगह से न हटना, अपने उसूलों को न छोड़ना फिर इसके बाद अल्लाह तआला का इरशाद हैः "और एक–दूसरे को सब्र की तलक़ीन करो, सब्र का माहौल, उसकी फ़िज़ा और कैफ़ियत पैदा करो, जैसे कोई बहुत बड़ा शामियाना होता है, अगर थोड़े आदमी होंगे तो छोटा शामियाना होगा, अगर कई सौ और कई हज़ार होंगे तो बड़ा शामियाना होगा। अल्लाह तआला तलक़ीन फ़रमाता है कि सब्र का इतना बड़ा शामियाना बनाओ कि सबके सरों पर वह तना हुआ हो। फिर आख़िर में फ़रमाता हैः "अपने अक़ीदे की सरहदों पर जमे रहो, कुछ हो जाए, दुनिया बदल जाए, हुकूमतें बदल जाए, सिक्का और ज़बान बदल जाए, ताक़त बदल जाए, हम अपने अक़ीदे से जो अल्लाह के रसूल स0अ0 ने और सब पैग़म्बरों ने हमें अता फ़रमाया है उससे हम ज़रा भी इन्हिराफ़ न करेंगे और अक़ीदा–ए–तौहीद से ज़र्रा बराबर न हटेंगे कि इस दुनिया का बनाने और इसका चलाने वाला दोनों एक हैं। तख़लीक़ उसी का काम है। हकमे दुनिया और इन्तिज़ाम करना उसी का काम है। बहुत से मज़ाहिब और फ़िरक़ों का यह अक़ीदा है कि दुनिया तो अल्लाह तआला ने बनायी है लेकिन उसको बहुत सी ताक़ते चला रही हैं। कोई जिलाता है, कोई मारता है, कोई बीमार को अच्छा करता है, कोई अच्छे को बीमार। नहीं, अल्लाह तआला ने इस दुनिया को पैदा किया और वही इसका नज़्म व नस्क चलाता है।

तो मायने यह हैं कि अपने अक़ीदे की सरहद पर बैठ जाओ और इससे हरगिज़ हटने न पाओ, चाहे कितने बड़े–बड़े इम्तिहान आज़माइश पेश आएं, मुसीबतें आएं, आंधियां आएं, ज़लज़ले आएं, बिजलियां गिरें, हम अपनी सरहद से हटने वाले नहीं हैं। कोई बड़ी से बड़ी ताक़त हमको वहां से हटाए, हम घर और बाल–बच्चों को छोड़ देंगे, अपने अक़ीदे और अपने दीन से हरगिज़ नहीं हटेंगे। यह आयत अगर हम अपने दिल पर लिख ले और हमारा ज़हन इसको कुबूल करले और अल्लाह तौफ़ीक़ दे तो हर ज़माने के लिये पूरा पैग़ाम रखती है। इस ज़माने के लिये तो ख़ास तौर पर यह आयत मोजज़ा है, जैसे उस ज़माने में यह आयत उतरी हो और इस ज़माने के लोगों से ख़िताब हो।

यह दीन जो अल्लाह तआला ने आपको अता किया है इसके लिये जहां और चीज़ें हैं वहीं थोड़ी सी समझ और थोड़ी सी कोशिश की ज़रूरत है और अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ शर्त है। इन सबके साथ थोड़ा सा इरादा और थोड़ी सी नहीं बल्कि बहुत ज़्यादा हिम्मत चाहिये वह यह कि अल्लाह तआला की तरफ़ से हमको जो पैग़ाम मिला है उसको हम सीने से लगा लेंगे और उसको अपनी ज़िन्दगी का मसला बना लेंगे। जान जाए, चली जाए लेकिन हम अपने दीन से हटने वाले नही।

इसमें पैग़म्बरों के ज़रिये हमको जो नेमत अता फ़रमायी है, उसके सामने दुनिया की तमाम दौलतें और तमाम हुकूमतें गर्द हैं। इस नेमत को दांतों से पकड़ लो और आंखों में उसको बिठाओ और दिल में जगह दो जिसने इस दीन की क़द्र की तो उसने गोया मज़बूत कड़ी को थाम लिया। हर ज़माने का और ख़ास तौर से इसके तक़ाज़े बदलते रहते हैं। ज़माने के इम्तिहानात और आस–आज़माइशें बदलती रहती हैं। उसकी तरग़ीबात, लालचें, उसकी ज़बान, उसका क़ानून हत्ता कि निज़ामे हुकूमत व सियासत में तब्दीली होती रहती है। मैं किसी एक मुल्क या किसी एक ज़माने को नहीं कहता, मेरे सामने तो पूरी तारीख़ है, कभी ऐसा भी वक़्त आता है जब अपने दीन पर क़ायम रहना मुश्किल हो जाता है। दूसरी ताक़ते उसको अपने सियासी ग़रज़ व मक़ासिद के हुसूल के लिये अपनी ताक़त में आने और अपना सिक्का चलाने और मुल्क पर हुकूमत पर करने के लिये यह कोशिश करती हैं कि मुसलमान अपने दीन से हट जाएं। उनसे मुतालिबा किया जाता है कि हमारी देवमालाई क़ुबूल कर लो और कुफ़्र व शिर्क के मुताल्लिक़ अपने रवैये में तब्दीली कर लो, लेकिन दीन का मुतालबा यह है कि जान चली जाए मगर दीन में कमी–बेशी क़ुबूल न करें। दीन की हिफ़ाज़त में अगर सैंकड़ों और हज़ारों नही लाखों जाने चली जाएं और इज़्ज़तें क़ुर्बान हो जाएं तब भी कोई परवाह नहीं कि अस्ल चीज़ जिससे क़ब्र व क़यामत में वास्ता पड़ने वाला है, वह यही दीन है, वहां तो यह पूछा जाएगा कि तुम्हारा रब कौन है?तुम्हारा दीन क्या है?और यह हुज़ूर स0अ0 कौन हैं? क़ब्र में यह काम नहीं आएगा कि आप फ़लां के बेटे हैं और एम.ए. पास हैं। किसी म्यूनिसीपलटी के या रियासत व हुकूमत के गवर्नर व हाकिम हैं। जिस तरह आप ट्रेन में बिना टिकट सवार हो जाएं और टिकट क्लेक्टर टिकट मांगे तो आप यह कहेंगे कि हमारे पास अच्छी घड़ी व अच्छा साज़ व सामान है। हम फ़लां के बेटे और फ़लां के पोते हैं, लेकिन आपके इस जवाब से कोई फ़ायदा न होगा, वहां तो टिकट का सवाल होगा, यही हाल उस तालिब इल्म का होता है जो इम्तिहान का परचा सही–सही जवाब देता है तो कामयाब हो जाता है। क़ब्र का भी यही हाल है, जहां अपना दीन और अपना ईमान काम आता है, इस दुनिया का भी यही हाल है। अल्लाह तआला यह देखता है कि यह हमारे दीन पर कितना क़ायम है और उसके लिये किसने कितनी क़ुर्बानियां दी हैं और कितनी मज़बूती और इस्तिक़लाल का सुबूत दिया है।

तो सबसे पहली मांग यह है कि सब्र व ज़ब्त से काम लो, अपने दीन पर मज़बूती से जमे रहो, दूसरों को भी थामें और जमाए रखो, और उनको सब्र की तलक़ीन व तरग़ीब दो। यह इस तरह हासिल होगा कि पहले ख़ुद दीन का इल्म हासिल कर लें और अपनी औलाद को भी दीन का इल्म दें और इसकी फ़िक्र करें कि उनका दीनी अक़ीदा ठीक है या नहीं। यह अल्लाह और उसके रसूल को पहचानते हैं या नहीं। यह नहीं कि बच्चों की तरक़्क़ी और ख़ुशहाली और दौलतमंद घरानों में उनकी शादी कर दी जाए। उसकी अल्लाह के यहां कोई क़ीमत नहीं। आपने अपने बच्चों को दीन की तालीम नहीं दी, इसलिए बुनियादी काम यह है कि अपने बच्चों की दीनी तालीम व तरबियत का एहतिमाम करें और उसकी राह में कुछ क़ुर्बानी देनी पड़े, कुछ ख़तरा मोल लेना पड़े, लेकिन हिम्मत से काम लो और अपने बच्चों, घरवालों फिर मुहल्ले वालों और उससे बढ़कर गांव वालों और आस–पास के लोगों को घूम–फिर कर दीन की तालीम दो, इसलिए तब्लीग़ी जमाअत है। उसका गश्त कराया जाता है। जो नेमत और दौलत अल्लाह तआला ने आपको अता की है और जितना दीन आप जानते हैं वह दूसरों को भी बताइये। इस वक़्त सबसे ज़्यादा ज़रूरत इस बात की है कि क़ुरआन मजीद और उर्दू पढ़े बिना बच्चों को रहने न दीजिए, चाहे लोग आपको धमकाएं और कहें कि यह क्या खायेंगे, क्या कमाएंगे, उनको आजकल की ज़बान पढ़ाइये, आजकल का कोर्स पढ़ाइये, स्कूल भेजिए, लेकिन नहीं! ख़ुदा के यहां आपका दामन होगा और उनका हाथ होगा और हमको तो डर है कि ख़ुदा का दस्ते क़ुदरत और दस्ते ग़ज़ब न हो और आपका दामन न हो कि क्या पढ़ाया था अपने बच्चों को और क्या सिखाया था उनको।

आप याद रखिये कि दीनी तालीम के बिना हिन्दुस्तान में मुसलमानों का रहना मुमकिन नहीं है।

.....शेष पेज 16 पर

यूरोप की बौद्धिक व सांस्कृतिक बिसात

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

यूरोप की ज़िन्दगी में तालीम व तरबियत के मैदान में दीन से मुकम्मल दूरी व इन्क़िताअ एक लाज़मी अम्र है। इस माहौल में आदमी बरसों तक अल्लाह का नाम सुनने से महरूम रहता है। दीन पर अमल करना तो बड़ी बात है, एक हिन्दुस्तानी मुसलमान जो वहां तीस बरस से मुक़ीम हैं और जिनकी औलाद सन्ने शऊर और बलूग़ दोनों तक वहीं पहुंची, कहने लगे कि मैं पूरी ताक़त के साथ और अपने तजुर्बे की बिना पर कहता हूं कि आदमी सिर्फ़ अपनी पहली नस्ल को नाम का मुसलमान बाक़ी रख सकता है, उसके बाद उसकी दूसरी नस्ल उससे भी गई–गुज़री निकलेगी। यही वह वजह है जिनकी बिना पर यूरोप की ज़िन्दगी में निहायत ज़रूरी मालूम होता है कि जिस क़दर हो सके इस्लामी अक़ामत ख़ाने क़ायम किये जाएं, जिसमें कम से कम ज़रूरियाते ज़िन्दगी और आदात मुसलमान के उसूल और तक़ाज़ों के मुताबिक़ मुहैया हों ताकि आदमी किसी न किसी दर्जे का तो इस्लामी माहौल पा सके।

यूरोप की ज़िन्दगी की एक दूसरी बड़ी मुसीबत यह है कि वहां किसी के पास अपने काम से फ़ाज़िल वक़्त नहीं है, जिन्दगी की मसरूफ़ियात और फ़ासलों की ज़्यादती की वजह से आपस में राब्ता भी बहुत कम है। भाई–भाई के लिये और दोस्त–दोस्त के लिये क़ाबिले लिहाज़ हद तक वक़्त व तवज्जो नहीं सर्फ़ कर सकता, अगर कोई बीमार हो तो अस्पताल जाए या ख़ुद अपनी तीमारदारी करे। किसी को दोस्तों व अज़ीज़ों की हमदर्दी की ज़रूरत हो तो सब्र करे और अपना दिल मज़बूत बनाए।

यूरोप की सारी दिलचस्पियों और ताल्लुक़ात का सरचश्मा सिर्फ़ दुनियावी लुत्फ़ व मनफ़अत और आमदनी है। माद्दी इक़दार को अव्वलियत हासिल है, इन्सानी अक़दार का दर्जा उसके बाद आता है। लेकिन उसके साथ–साथ ज़ाहिरी और तहज़ीबी अख़लाक़ पूरी तरह पाया जाता है। वहां का आदमी बात तवज्जो से सुनेगा और ठीक से जवाब देगा। काम अगर उसको करना चाहिये और कर सकता है तो ज़रूर तन्दही और ख़ूबी के साथ करेगा। ममनूइयत के अल्फ़ाज़ भी ज़रूर इस्तेमाल करेगा। यह बातें यक़ीनन बहुत अच्छी है। अफ़सोस है कि हमारा मौजूदा मुआशरा उनसे ख़ाली है। यूरोप में ज़ाहिरी सफ़ाई और आरास्तगी और सुथराई और तर्ज़ मिलता है जो मश्रिक़ के आला मेयार के इलाक़ों में भी मुश्किल है। लेकिन वह अपने जिस्म की सफ़ाई के लिये पानी तक़रीबन बिल्कुल नहीं इस्तेमाल करते। गुस्ल भी तक़रीबन मादूम है। अक्सर आदमी महीनों और बरसों नहीं नहाते। पेशाब–पाख़ाने के लिये तो सिर्फ़ काग़ज़ ही चलता है। एक मुसलमानके लिये यह भी बड़ी मुसीबत है कि अजनबी जगह वह इस्तिंजे के लिये पानी नहीं पाता और काग़ज़ से सफ़ाई की उसको आदत नहीं होती, फिर लगातार करना तो कराहियत का बाइस बनता भी है।

यूरोप में खाने की मुसीबत भी यकसा तरीक़े से पायी जाती है। अलबत्ता लन्दन में अब बाज़ गुंजाइश पैदा हो गयी हैं, जैसेः यह कि शहर में बाज़ जगह ज़बीहा होने लगा है, लेकिन बाज़ वक़्त हलाल गोश्त के तलबगार के लिये इस क़दर दौड़ना पड़ता है कि वह सर्फ़े नज़र करने पर मजबूर हो जाता है, इसलिए एक मुसीबत यह भी है कि बाज़ मुसलमान दुकान पर ग़ैर ज़बीहा गोश्त ज़बीहा के नाम पर बिकता है नीज़ वहां मुक़ीम मुसलमान बहुत शाज़ व नादिर गोश्त के मामले में एहतियातय करते हैं। हराम चरबी का मसला भी बड़ा सख़्त मसला है, यूरोप में चर्बी घी–तेल की जगह पर इस्तेमाल की जाती है, इसलिए मुश्किल से कोई खाने की चीज़ उस चर्बी से बचती है लेकिन फिर भी बहुत से हिन्दुस्तानी–पाकिस्तानी भाई एहतियात पर ताहाल क़ायम हैं।

यूरोप में सुअर की मुसीबत भी बड़ी मुसीबत है। किसी मग़्रिबी को समझना कि हम एक माकूल वजह से सुअर से परहेज़ करते हैं बड़ा मुश्किल है। वह इस बात को नहीं समझ पाते और सुअर की किसी न किसी चीज़ से किसी न किसी खाने को आलूदा कर देते हैं। जर्मनी में तो सुअर तहज़ीब व तबरीक का मुहावरह बन गया है, जब किसी को किसी महबूब चीज़ के हुसूल पर मुबारकबाद देते हैं तो कहते हैं "तुमको सुअर मिला"।

क़ौमों पर असर डालने का एक अहम ज़रिया "तालीम" है। तालीम से क़ौमें बनती और बिगड़ती हैं। तालीम क़ौमों की तरक़्क़ी का ज़रिया है। ज़िन्दगी को बनाने, संवारने, तरक़्क़ी देने के लिये जिन उलूम व मालूमात से हम आप

ज़रूरतमंद होते हैं वह हमको इल्म व तालीम से ही हासिल होते हैं, इस्लाम ने तालीम की बड़ी अहमियत बतायी है और ज़िन्दगी के आम मामलात के अलावा मज़हबी उमूर को भी इल्म व तालीम से वाबस्ता किया है जहां तक दुनियावी आम ज़िन्दगी का ताल्लुक़ है तो उसमें आगे बढ़ने और तरक़्क़ी करने की बड़ी हिम्मत अफ़ज़ाई की है। मुसलमानों ने उरूज के ज़माने में इल्म व तालीम के दायरे में बड़ी तरक़्क़ी की और सरमायाय–ए–इल्मी में बहुत इज़ाफ़ा किया। यह वह ज़माना था कि यूरोप में इल्म व तालीम से बिल्कुल दिलचस्पी न थी, बल्कि इल्म से दिलचस्पी रखने वालों के मामले में न पसंदीदगी का रवैया था। जो कभी सख़्त सज़ाओं तक पहुंच जाता था। अब एक अर्से से यूरोप तालीम पर ज़ोर दे रहा है और इल्म व तालीम से अपनी उस दिलचस्पी को सिर्फ़ अपना कारनामा ज़ाहिर कर रहा है हालांकि उसका आग़ाज़ स्पेन के मुसलमानों से सीख कर किया है। इसमें शुब्हा नहीं कि इल्म व तालीम से दिलचस्पी में वह अब आगे हो गया है। उसके इसको बहुत अहमियत दी है। इस अहमियत व कोशिश का नतीजा है कि उसके यहां तक़रीबन सौ फ़ीसद लोग तालीम याफ़ता हैं।

इसके बिलमुक़ाबिल मश्रिक़ी मुमालिक का हाल बहुत बुरा है। इल्म व तालीम से इन मोमालिक की दिलचस्पी घटकर बहुत नीचे आ गयी थी। अब भी बावजूद कुछ दिलचस्पी बढ़ जाने के ज़्यादा से ज़्यादा 20 प्रतिशत लोग तालीमयाफ़ता हैं। एक तरफ़ तालीमयाफ़ता लोगों की कसरत है तो दूसरी तरफ़ ग़ैर तालीमयाफ़ता लोगों की कसरत है। इस वजह से मश्रिकी क़ौमें ज़िनदगी के हर मैदान में यूरोप की क़ौमों से पीछे हैं और इसके साथ–साथ इनसे मरऊब भी हैं। जब हमारे अवाम व ख्वास अपनी ज़िन्दगी और अपने इर्द–गिर्द की ज़िन्दगी से वाक़फ़ियत न रखेंगे तो किस तरह अपनी ज़रूरत की राह निकाल सकेंगे और अपने मुक़ाबिल का मुक़ाबला कर सकेंगे?

यह भी हक़ीक़त है कि अब यूरोप अपनी ज़ालिमाना और मनमानी और ख़ुदगर्ज़ाना ज़िन्दगी की ढीली और बड़ी चादर में उलझकर गिरने वाला है। अमरीका अपनी सियासी व इक़्तिसादी हवस से दूसरी क़ौमों के मसाएल में ज़्यादा उलझता जा रहा है। इसकी वजह से ख़ुद उस मुल्क की तरक़्क़ियात में ग़फ़लत हो रही है और उसकी वजह से उसके इक़्तिसादी मामलात से उसकी इक़्तिसादी सूरतेहाल मुतास्सिर और कमज़ोर होने लगी है। मुख़्तलिफ़ मुल्कों को सियासी मक़सद से कर्ज़ दिये चले जाना उसके लिये दुश्वारी का सबब बन रहा है। आलमी मंडी में उसकी तिजारत को भी ज़वाल हो रहा है। लिहाज़ा अमरीका इक़्तिसादी मैदान में पीछे हो जाने से डर रहा है और इक़्तिसादी मसाएल में उलझने लगा है।

दूसरी तरफ़ जर्मनी और जापान इक़्तिसादियात में काफ़ी आगे बढ़ गये हैं और अमरीका को आंख दिखाने लगे हैं। दुनिया जापान के माल को ज़्यादा अहमियत दे रही है। जापान का माल सस्ता होता है। चुनान्चे पूरी दुनिया में जापान का माल ज़्यादा चल रहा है।

अमरीका अपनी साबिक़ा कोशिशों से दुनिया का वाहिद सबसे बड़ा मुल्क बन गया है और अपनी साज़िशों और इस्तहसाली तरकीबों से दुनिया का नापसंदीदा मुल्क बन गया है। पूरी दुनिया पर इसका सियासी व इक़्तिसादी दबाव है। मश्रिकी वुस्ता पूरा इसकी मुट्ठी में है। वहां सिर्फ़ ईरान और सूडान अमरीका की ताबेदारी से गुरेज़ करने की जुर्रत कर रहे हैं और अमरीका के दबाव से बचने की जद्दोजहद में लगे हुए हैं। कहा नहीं जा सकता कि वह कहां तक मुक़ाबला कर सकेंगे। इस वक़्त अमरीका के पास इक़्तिदार की सबसे बड़ी ताक़त है। लेकिन अब एक बड़ी तब्दीली के आसार नुमाया हो रहे हैं। इसलिए कि पूरी दुनिया अमरीका की शरारतों को समझने लगी है।

हमारे फ़ायदे की बात यह है कि हम अपनी ताक़त और कमज़ोरी को समझे और उसके मुताबिक़ अपने को तैयार करें और दूसरे यह कि अपने दुश्मन को कमज़ोर समझना और नारों और जोशीले बयानात, पुरजोश होना सही बात नहीं है। इस सिलसिले में मुसलमान मुल्क बहुत पीछे हैं। एक तबक़ा वह है जो आंख बन्द करके यूरोप की बरतरी का क़ायल है और यूरोप के इल्म व तमद्दुन से भी बेहद मरऊब है और एक तबक़ा ऐसा है जो ख़ुद से कुछ करने की हिम्मत नहीं रखता है। यह जानता ही नहीं कि कौन ताक़तवर है और कौन कमज़ोर है?

आज ज़रूरत है इक्तिसादियात, ज़राए इब्लाग़ और तालीम के मैदान में आगे बढ़ने की। इक़्तिसादियात तो तरक़्क़ियात की कुंजी है और तालीम व ज़राए इब्लाग़ ग़ैर मामूली असरात पैदा करते हैं इसलिए कि जो चीज़ दिल व दिमाग़ में डाली जाती है वही दिल व दिमाग़ में भर जाती है और फिर वही निकलती है। इससे आदमी का किरदार बनता है और हिकमते अमली पैदा होती है।

त्याग तथा समानता क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

त्याग का मतलब है कि आदमी दूसरों की ज़रूरतों को अपनी ज़रूरतों को तरजीह दे और दूसरे को अपनी ज़ात पर मुक़द्दम करे, मुसावात ग़म गुसारी और दिलदारी को कहते हैं, दूसरों के साथ अच्छा बर्ताव करना और ऐसे वक़्त में उसका काम करना जब उसको ज़रूरत हो।

अल्लाह से क़रीब होने का ज़रियाः

त्याग अल्लाह से क़रीब होने का एक बड़ा ज़रिया है और बड़े सवाब की बात है, इसलिए कि इसमें आदमी अपने आप को दबाता है, दिल पर जब्र करता है, अपनी इच्छाओं को कुचलता है, और मन को मारना पड़ता है। इसीलिए अल्लाह की रज़ा का बहुत बड़ा ज़रिया है और अपनी इस्लाह का भी एक मुअस्सिर ज़रिया है। अगर यह मिज़ाज बन जाए तो ऐसा मुफ़ीद मिज़ाज है कि जो ख़ुद उसको फ़ायदा पहुंचाता है और समाज को भी फ़ायदा पहुंचाता है। बहुत से लोग यह समझते हैं कि इसका फ़ायदा समाज को तो हो सकता है, दूसरों को हो सकता है, लेकिन हमको इससे क्या फ़ायदा है? हालांकि वाक़्या यह है कि सबसे बढ़कर फ़ायदा ईसार करने वालों को है। यह ऐसी सिफ़त है कि वह इससे वह अल्लाह के क़रीब होने की मंज़िले तय करता है जो दूसरे कामों से कई बार तय नहीं होते और यह कोई मामूली बात नहीं है कि अल्लाह तआला अपने करीब कर ले।

एक मुश्किल कामः

नफ़्स को कंट्रोल करना, नफ़्स को क़ाबू में करना सबसे मुश्किल बात है, इसलिए कि नफ़्स बुराई सिखाता है। अल्लाह का इरशाद हैः

" नफ़्स तो बुराई ही सिखाता है, हां मेरे रब की जो मेहरबानी हो जाए।"

नफ़्स को कंट्रोल करना सबसे मुश्किल काम है। नफ़्स बुराई ही के लिये कहता है। बुराई ही पर आमादा करता है। रमज़ान में शैतान क़ैद कर दिये जाते हैं और ख़ास तौर से सरकश शैतान क़ैद कर दिये जाते हैं, लेकिन क्या गुनाह छूट जाते हैं?जो लोग गुनाहों के आदी होते हैं उनके गुनाह नहीं छूटते, अलबत्ता कम ज़रूर हो जाते हैं और बाज़ तो अल्लाह माफ़ करे ऐसे शामत के मारे होते हैं कि उनकी ज़िन्दगी में कोई फ़र्क़ ही नहीं पड़ता रमज़ान और ग़ैर रमज़ान में। ज़ाहिर है कि इसकी वजह सिर्फ़ यही नफ़्स है। इसलिए कि नफ़्स को कंट्रोल करना बहुत मुश्किल होता है और नफ़्स ऐसी–ऐसी जगहों से डसता है कि आदमी कई बार सोचता भी नहीं है। आदमी बहुत मुतमईन हो जाता है कि माशा अल्लाह सब ख़ैरियत है। अल्हम्दुल्लिाह हमारी बहुत अच्छी तरबियत हो गयी है। हम बड़े अच्छे माहौल में हैं, लेकिन नफ़्स जैसे ही देखता है कि इन्सान ज़रा भी ग़ाफ़िल हुआ तो ऐसा डंक मारता है कि आदमी एकदम चौंक जाता है, उसके समझ में नहीं आता कि क्या हो गया, यह कहां से ग़लती हो गयी, हालांकि उसकी वजह यह होती है कि वह नफ़्स से ग़ाफ़िल हो जाता है।

नफ़्स की मिसालः

मौलाना रूम रह0 ने एक हिकायत लिखी है कि एक लकड़हारा किसी जंगल में सर्दियों के ज़माने में लकड़ी काट रहा था, उसने अपना पूरा गट्ठर एक जगह रखकर बांधा तो बेख़्याली में एक अकड़ा हुआ सांप भी उसमें बंध गया। उसने सोचा कि गठरी बंध गयी है अब उस अकड़े हुए सांप को निकाल कर बाद में फेंक देंगे, उसमें बचा ही क्या है। अभी ज़रा सा आराम कर लें, चुनान्चे उसने आग जलायी, आग में कुछ लकड़ियां डाली और तापने लगा, फिर उसको नींद आ गयी, इधर जब अकड़े हुए सांप को गर्मी मिली तो सर्दी की वजह से अकड़े हुए सांप के अन्दर जान आ गयी जो कि मरा नहीं था, लिहाज़ा वह सांप उस गट्ठर से निकला और उसी शख़्स को डस लिया और उसका काम तमाम हो गया। मौलाना रूम रह0 ने लिखा है कि नफ़्स की यही मिसाल है, आदमी समझता है कि नफ़्स मर गया है, बिल्कुल ठंडा हो गया है, लेकिन उसको जहां मौक़ा मिलता है और जहां गर्मी मिलती है, वह अपना काम कर जाता है।

मालूम हुआ कि यह बहुत ख़तरनाक चीज़ है, और उससे बचना सबसे मुश्किल काम है।

ईसार की तासीरः

ईसार के अमल को अख़्तियार करने का सबसे बड़ा

क़ायदा यही है कि उसमें नफ़्स की बहुत कुछ इस्लाह होती है। इसकी वजह यह है कि आदमी को जिस चीज़ की रक़बत होती है, जिसकी तरफ़ वह लपकना चाहता है, जिसको हासिल करना चाहता है और यह नफ़्स के तक़ाज़े से होता है। अब ज बवह उसको कंट्रोल करता है और यह कोशिश करता है कि हम नफ़्स के तक़ाज़ों पर न चलें बल्कि यह देखें किइस वक़्त दीन का क्या तक़ाज़ा है। जब यह मिज़ाज बनता है तो इससे नफ़्स कंट्रोल में आता है। इसीलिए ईसार की सिफ़त इस्लाहे नफ़्स का एक बेहतरीन ज़रिया है लेकिन यह बड़ा मुश्किल काम है। जैसा कि नफ़्स को कंट्रोल में क रना मुश्किल है। इसी तरह ईसार भी मुश्किल है।

ईसार की शक्लें:

ईसार के लिये ज़रूरी नहीं कि बहुत बड़ा ईसार हो। इसकी बहुत सी शक्लें होती हैं। मसलन आप मस्जिद से निकलें और बाहर सीढ़ियों पर भीड़ है। आपने देखा कि कोई कमज़ोर शख़्स आपके पीछ है, उसको आपने आगे कर दिया और ख़ुद पीछे हो गये यह भी ईसार हो गये। आप इज्तिमाई निज़ाम में शरीक हैं और बाथरूम गये और देखा कोई ज़्यादा ज़रूरत मंद है तो आपने उसको आगे बढ़ा दिया तो यह भी ईसार है। आप इज्तिमाई दस्तरख़्वान पर बैठे और रोटी आपको पहले मिल गयी। आपने सोचा कि जो दाएं तरफ़ बैठा है यह ज़्यादा मुस्तहिक़ है लिहाज़ा अपनी रोटी उसको दे दी यह भी ईसार है। और एक बड़ा ईसार यह भी है कि दस्तरख़्वान पर अच्छे खाने हों, लज़ीज़ चीज़ें हों, जिनकी तरफ़ आपको बड़ी रग़बत हो और वह बहुत महदूद मिक़दार में हों, लेकिन आप यह कोशिश करें कि यह चीज़ हम अपने साथी को खिला दें मसलन दो गुलाबजामुन है और तीन आदमी हैं अब आप बहाने से दोनों गुलाब जामुन दो लोगों को ख़िला दें और आप ख़ुद न खाएं जबकि देखते ही मुंह में पानी आ गया हो।

बाज़ मर्तबा यह खाने वाला ईसार बड़ा क़ीमती होता है और इसकी वजह यह है कि नफ़्स पर बड़े आरे चलाने पड़ते हैं। ख़ास तौर पर उन लोगों को जो खाने के शौक़ीन होते हैं। और बाज़ लोग तो शौक़ीन होते ही नहीं। तभी तो ऐसा होता है किवह शौक़ मिटा देते हैं। इतना ईसार करते हैं कि शौक़ ख़त्म हो जाता है और कभी मिज़ाज की बात भी होती है यानि खाने से रग़बत ही नहीं होती, लेकिन जो रग़बत रखने वाले हैं ज बवह ईसार करते हैं तो नफ़्स पर बहुत छुरी चलानी पड़ती है। मालूम हुआ कि ईसार की मुख़्तलिफ़ शक्लें होती हैं और ईसार की बड़ी–बड़ी शक्लें भी हैं।

सहाबा का ईसार:

हज़राते सहाबा रज़ि0 ने ईसार की जो मिसालें पेश की हैं वह दुनिया पेश करने से कासिर है। वह ईसार की इन्तिहा है। जब आप स0अ0 ने अन्सार वह मुहाजिरीन के दरमियान मुआख़ात फ़रमायी तो ईसार के जो नमूने उन्होंने पेश किये दुनिया वह नमूने पेश नहीं कर सकती। एक सहाबी ने यहां तक ईसार की इन्तिहा कर दी कि एक मुहाजिर से उनकी मुआख़ात करायी गयी। उन्होंने उनको आधा माल दे दिया और आधा ख़ुद रखा। और कहा यह घर है यह बाग़ है यह कारोबार है, इन सब में आपका आधा–आधा हिस्सा और यह मेरी दो बीबियां हैं आप अभी आएं हैं आप जवान हैं आपको ज़रूरत है आप देख लीजिए आपको इनमें से जो पसंद हो मैं उसको तलाक़ दे दूं, और जब इद्दत गुज़र जाए तो आप शादी कर लीजिए। बिला शुब्हा यह ईसार की इन्तिहा है। लेकिन अगर एक तरफ़ अन्सार का ईसार है तो दूसरी तरफ़ हज़राते मुहाजिरीन का इस्तिग़ना भी है। तारीख़ में दोनों नमूने ऐसे हैं कि शायद अब सामने नही आ सकते। इन्फ़िरादी तौर पर शायद कुछ वाक़्यात पेश आ जाएं लेकिन इज्तिमाई तौर पर वह नमूना दुनिया नहीं देख सकेगी, जो हज़राते सहाबा ने पेश किया। और ऐसा क्यों न हो, ज़ाहिर है कि वह हुज़ूर स0अ0 के तरबियत याफ़्ता, उनके साथ रहने वाले, आपकी निगाह उन पर पड़ गयी, वह एक निगाह काफ़ी हो गयी, अल्लाह ने उनको वह मरातिब अता फ़रमा दिये जो किसी आदमी को सैंकड़ों साल की मेहनत से हासिल न हो सकते थे। आप कुवां खोदिये और अगर बहुत सख़्त जगह है तो न जाने कितनी दुश्वारी होगी, और बड़ी मुश्किल से पानी मिलेगा, लेकिन अल्लाह के रसूल स0अ0 ने सहाबा को एक निगाह में लबालब हौज़ पर पहुंचा दिया, सामने लबालब पानी भरा है, जितना चाहो पियो, सैराब हो जाओ, और अल्लाह ने उनको वह मक़ाम अता फ़रमाया जो किसी को नहीं मिलता है। उनके ईसार के जो वाक़्यात है वह इन्तिहाई दरजे के हैं। वैसा नमूना कोई पेश नहीं कर सकता, वह बहुत आला दर्जे का ईसार है।

ईसार और इन्सानी मिज़ाजः

ईसार ऐसी चीज़ है कि आदमी उसका मिज़ाज बनाए तो वाक़्या यह है कि अपनी भी इस्लाह और हालात भी बेहतर होंगे। आज हमको समाज का जो बिगाड़ नज़र आ रहा है, उसका सबसे बड़ा सबब ख़ुदगर्ज़ी है, जो ईसार के बिल्कुल मनाफ़ी है। हमारा जी क्या चाहता है? वह चाहता है कि हमको सब ख़ैर हासिल हो, चाहे वह दुनिया की हो या दीन की हो। दीन का ख़ैर हासिल हो तो बड़ी अच्छी बात है और बड़ी हद तक तबई बात है, लेकिन दूसरे का ख़ैर छिन जाए तो अच्छी बात नहीं, और दुनिया के बारे में भी हमारा तसव्वुर यही होता है, बल्कि अगर ग़ौर किया जाए तो दीन के बारे में सोचने वाले ख़ाल–ख़ाल हैं। कौन सोचता है कि माशाअल्लाह आज उन्होंने दस पारे पढ़े हैं तो हम बारह पारे पढ़ेंगे। यह ख़्याल होता ही किसको है। लेकिन यह ख़्याल सबको होता है कि अगर उन्होंने पन्द्रह हज़ार कमाए तो हम बीस हज़ार कमा कर दिखाएंगे और अगर उनकी तनख़्वाह बीस–बाइस हज़ार है तो हम ऐसी नौकरी ढूढेंगे कि हमको पचास हज़ार मिल जाए, और ख़ुदगर्ज़ी की इन्तिहा यह होती है कि जब आदमी देखता है कि किसी के लिये कोई चीज़ आ रही है तो दिल में यह होता है कि हमीं को मिल जाए तो बहुत अच्छा है, और उसके लिये कोशिश भी करता है, यहां तक कि हक़ तलफ़ी करता है और दूसरों का हक़ मारता है।

ख़ुदगर्ज़ी का दौरः

हमारे अन्दर इन्तिहाई दर्जे की ख़ुदगर्ज़ियां होती हैं। पैसे की तलब होती है। मन्सब की तलब होती है। इज़्ज़त की तलब होती है। और सबसे ख़तरनाक तलब इज़्ज़त की होती है। आदमी मुस्तहिक़ हो या न हो, लेकिन यह सोचता है कि सबसे ज़्यादा हमारी इज़्ज़त होनी चाहिये और अगर ज़रा भी कमी हो जाए तो अच्छे–अच्छे दीनदारों का हाल यह है कि दिल में बात आ जाती है, जैसेः आज जब मैं जा रहा था तो उसने सलाम नहीं किया, आज उसने आकर मुसाफ़ह नहीं किया, अजीब–अजीब तरीक़ों पर दिल में ख़्याल पैदा होते हैं, हालांकि क्या हम और आप इसके मुस्तहिक़ थे कि लोग हमसे मुसाफ़ह करें? एक बड़े बुज़ुर्ग का वाक़्या सुना कि जब वह निकले तो सब लोग उनसे मुसाफ़ह के लिये टूटे, चुनान्चे मुंह लगे मुरीद ने कहाः हज़रत! कैसा अल्लाह का इनआम है, आप पर लोग टूट पड़ते हैं, बुज़ुर्ग फ़रमाने लगेः तुम अजीब बात कहते हो, लोग मुसाफ़ह करते हैं तो मैं शर्म से पानी–पानी हो जाता हूं, मैं इस क़ाबिल नहीं हूं कि उनसे मुसाफ़ह करूं, और यह मुझसे मुसाफ़ह करते हैं, लेकिन इस ख़्याल से करता हूं कि शायद इनसे मुसाफ़ह करने से मेरी मग़फ़िरत हो जाए, न जाने कौन अल्लाह का बन्दा किस पाये का हो, वह मुहब्बत से हाथ मिला रहा है, हो सकता है कि मेरी मग़फ़िरत हो जाए। अल्लाह वालों का यह हाल होता है, लेकिन हम जैसों का यह हाल होता है कि मुसाफ़ह न करने पर दिल में ख़्याल आ जाता है। ज़ाहिर है कि यह ख़ुदगर्ज़ी की बात है, आदमी अपने लिये इज़्ज़त, दौलत और अच्छाइयां चाहे, अपने लिये राहतें चाहे, गर्मी के मौसम में मस्जिद में अपने लिये पंखे के नीचे जगह तलाश करता है और उसके लिये किसी को थोड़ा सा धक्का भी देना पड़ जाए तो कोई हर्ज नहीं है। इसलिए कि हमारा मिज़ाज है कि हमें अच्छी जगह मिल जाए। होना यह चाहिये कि हम दूसरों को अच्छी जगह लाकर खड़ा कर दें। यह अल्लाह तआला की रज़ा का ज़रिया है और इसी का नाम ईसार है, आदमी जो अच्छी जगह है वह दूसरों को देदे, मगर यह बड़ा मुश्किल काम है, लेकिन यह ऐसा आज़मूदह नुस्ख़ा है उन हज़रात का जिन्होंने आज़माया है, हम जैसों को तो इसका एक हिस्सा भी नहीं मिला, यह ऐसा नुस्ख़ा है कि उससे जितना अल्लाह का क़ुर्ब हासिल होता है, जितनी तरक़्क़ी होती है, और सुलूक के मनाज़िल तय होते हैं, वह किसी और ज़रिये से नहीं होते हैं, जो ईसार से होते हैं। इसमें आदमी अपने को क़ाबू में करता है, अपने को पीछे और दूसरों को आगे बढ़ाने की कोशिश करता है।

अल्लाह के रसूल स0अ0 की ज़िन्दगी उसका बेहतरीन नमूना है। आप स0अ0 ने अपने घरवालों के साथ वही मामला किया। हर ऐसे मसले में जहां दुनिया आ रही हो, दौलत मिल रही हो, इज़्ज़त मिल रही हो, आपने घरवालों को पीछे किया, दूसरों को आगे कर दिया, इसका नाम भी ईसार है। और यह ऐसी दौलत है कि अगर अल्लाह किसी को अता फ़रमा दे तो उस पर हज़ार बार शुक्र करे और कोशिश करनी चाहिये कि अल्लाह उसका कोई हिस्सा हमको भी अता फ़रमा दे।

नमाज़–ए–जनाज़ा के विभिन्न मसले

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

1– हमने बालिग़ो के लिये दुआ पिछले अंक में नक़ल की है, इसके बजाय ये दुआंए भी पढ़ सकते हैं:

(या अल्लाह! इसकी मग़फ़िरत फ़रमा, इसकी नुमायां मेज़बानी फ़रमा, उसकी क़ब्र को वसी फ़रमा, इसको पानी, बर्फ़ और ओला, से नहला दे, और इसकी ख़ताओं से इसको इस तरह पाक कर दे जैसे सफ़ेद कपड़े को मैल से साफ़ किया जाता है और इसके घर से बेहतर घर और इसके घरवालों से बेहतर घर वाले और इसके जोड़े से बेहतर जोड़ा बदला में अता फ़रमा और इसको जन्नत में दाख़िल फ़रमा और अज़ाब–ए–क़ब और दूसरे अज़ाबों से और जहन्नम से पनाह दे)

और चाहें तो दोनों को मिला कर भी पढ़ सकता है इसलिये शामी में दोनो दुआएं मिलाकर ही लिखी हुई हैं।

"या अल्लाह! मुसलमान मर्दों और औरतों की मग़फ़िरत फ़रमा।"

अगर यह भी न पढ़ सके तब भी केवल तकबीर कह देने से नमाज़ हो जाएगी।

2– पहली तकबीर के बाद दुआ की नियत से सूरह फ़ातिहा पढ़ना जाएज़ है।

3– नमाज़–ए–जनाज़ा के आदेशों में इमाम और इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ने वाले एक हैं। यद्यपि इमाम तकबीर और सलाम तेज़ आवाज़ से कहेगा।

4– कई जगह लोग तकबीर कहते समय अपना सर ऊपर (आसमान की तरफ़) उठाते हैं, फ़िक़्ही किताबों में इसका कोई ज़िक्र नहीं है इसलिये इसको तर्क कर देना चाहिये।

5– कई लोग जूते चप्पल पर जनाज़े की नमाज़ पढ़ते हैं, तो उसमें तफ़सील यह है कि अगर जूता और जगह दोनों पाक हों तो पहन कर नमाज़ जाएज़ है, जूते पाक हों और जगह पाक न हो, या जूते के ऊपर का हिस्सा और तल्ला नापाक हो तो जूते पहन कर नमाज़ जाएज़ न होगी। लेकिन अगर पैर जूते–चप्पल से बाहर निकाल कर जूते चप्पल रख पर ले तो नमाज़ जाएज़ होगी और अगर जूते नापाक हों तो न तो उन्हें पहने–पहने न उनसे पैर निकाल कर उन पर रखने की सूरत में नमाज़ सही होगी।

अगर एक समय में कई जनाज़े आ जांए

अगर एक समय में कई जनाज़े आ जांए तो:

1. अफ़ज़ल यह है कि हर एक की अलग अलग नमाज़–ए–जनाज़ा पढ़ी जाए और सबसे पहले उसकी नमाज़ पढ़ी जाए जो सबसे पहले लाया गया हो और अगर सब एक साथ एक साथ लाये गये हों तो उनमें अफ़ज़लियत के अनुसार क्रमानुसार करे तो सबसे ज़्यादा अफ़जल की पहले पढ़े, फिर जो उसके बाद हो।

2. और अगर चाहे तो सब की एक साथ ही नमाज़ पढ़ सकता है। इस हालत में तीन तरह से क्रम बनाना जाएज़ है।

पहला क्रम: यह है कि सबसे पहले सब जनाज़े इमाम के सामने क़िब्ला की तरफ़ लाइन में रख दिये जाएं, यानि एक जनाज़े को इमाम के सामने रख दिया जाए, फिर उसी से जोड़ कर उसके आगे दूसरे रख दिये जाएं, फिर इस तरह कि सबके सीने इमाम के सामने पड़ रहे हों और सबके सर एक ओर हों और पैर एक ओर हों, ये रूप इन तीनों क्रमों में सबसे अफ़ज़ल है।

दूसरा क्रम: यह है कि एक जनाज़े के सीने को इमाम की महाज़ात में रख दिया जाए और दूसरे को उसके बाद इस तरह रखा जाए कि इसका सर पहले वाले जनाज़े के कन्धे के पास हो फिर अगर तीसरा हो तो उसको भी दूसरे के बाद इस तरह रखा जाए कि तीसरे जनाज़े का सर दूसरे जनाज़े के कन्धे के पास हो।

तीसरा क्रम: यह है कि सब जनाज़ों को क्रमवार एक लाइन में इस तरह रख दिया जाए कि पहले जनाज़े का सीना इमाम की महाज़ात में हो फिर दूसरे जनाज़े का सिर पहले के पैरों के पास हो।.....

1. अगर जनाज़े अलग–अलग हैं, यानि मर्दों, औरतों, और बच्चों के जनाज़े इकठ्ठा हो गये हो गये हैं तो इमाम के पास या सामने मर्दों को रखा जाएगा, फिर बच्चों को, उसके बाद औरतों को।

2. जनाज़े एक ही तरह हैं सबसे अफ़ज़ल को और फ़ज़ल में सब बराबर हैं तो सबसे उम्र वाले को इमाम के सामने या उससे लगाकर रखना चाहिये।

मसबूक़ (नमाज़ में जिसकी तकबीर छूट जाए) क्या करे?

1. कोई व्यक्ति जनाज़े की नमाज़ में ऐसे समय पहुंचा कि इमाम कुछ तकबीरें उसके आने से पहले ही कह चुका था, तो वह आकर इन्तिज़ार करे और इमाम जब उसके आने के बाद वाली तकबीर कहे तो वह भी तकबीर कह कर शामिल हो जाए। (इसलिये कि अगर आते ही तकबीर कह कर शामिल हो गया तो उस तकबीर का एअतबार और शुमार नहीं होगा)

यह तकबीरें उसके हक़ में तकबीर–ए–तहरीमा की तरह होगी, फिर इमाम के सलाम फेरने के बाद बची हुई तकबीरें अदा करे, और अगर ये ख़ौफ़ हो गया हो कि दुआंए पढ़ने से देर हो जाएगी और उसके फ़ारिग़ होने से पहले जनाज़ा उठा लिया जाएगा तो सिर्फ़ तकबीरों की क़ज़ा करे दुआएं छोड़ दे।

2. अगर कोई व्यक्ति इमाम के तकबीर कहते समय मौजूद था लेकिन ग़फ़लत या कोताही के कारण उसके साथ तकबीरें नहीं कह सका, तो उसका इन्तिज़ार करने की ज़रूरत नहीं है, फ़ौरन तकबीर कह कर इमाम के साथ शामिल हो जाए।

3. या कोई व्यक्ति ऐसे समय पहुंचा कि इमाम चारों तकबीरें कह चुका है तो वो फ़ौरन तकबीरें कह कर इमाम के साथ शामिल हो जाए और इमाम के साथ सलाम फेरने के बाद तीन तकबीरों की क़ज़ा करे।

किसी ने पहली तकबीर तो इमाम के साथ कह ली, लेकिन दूसरी और तीसरी तकबीर सो जाने या किसी और शरई कारण से छूट जांए, तो वह पहले दूसरी और तीसरी तकबीर कहे, तीसरी तकबीर कहने के दौरान ही इमाम ने चौथी तकबीर कह दी हो तो उसको दूसरी तीसरी तकबीर से फ़ारिग़ होने के बाद अकेले अदा कर दे।

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि रसूलल्लाह (स0अ0) ने फ़रमायाः "बग़ली क़ब्र हम (अरबों) के लिये है और सन्दूक़ी हम (अरबों) के अलावा के लिये है।"

इन दोनों हदीसों से मालूम हुआ कि क़ब्र बग़ली भी खोदी जा सकती है और सन्दूक़ी भी, लेकिन सुन्नत बग़ली क़ब्र है। अतः बग़ली क़ब्र ही बनाने का इहतिमाम करे, यद्यपि यह कि ज़मीन नर्म हो और बग़ली क़ब्र बनाने में उसके धंस जाने की सम्भावना हो।

बग़ली क़ब्र का स्वरुप

बग़ली क़ब्र यह है कि पहले क़ब्र खोदे, फिर उसके क़िब्ला की तरफ़ एक गढ़ा खोदे और मरने वाले को उसमें रखे।

सन्दूक़ी क़ब्र

सन्दूक़ी क़ब्र (शक़्) यह है कि (लगभग एक फ़िट) क़ब्र खोद कर उसके बीच में गड्ढ़ा खोदे जिसमें मरने वाले को रखा जाए।

क़ब्र की लम्बाई–चौड़ाई

क़ब्र की गहराई कम से कम आधी क़ामत (क़द) रखनी चाहिये। उससे ज़्यादा क़ामत की लम्बान तक रखना बेहतर है।

लम्बाई आवश्यकतानुसार (मरने वाले की लम्बाई के अनुसार) रखी जाए, और चौड़ाई लम्बाई के आधी रखी जाए।

क़ब्र में मरने वाले को किस तरह उतारा जाए?

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि0) से रिवायत है कि नबी–ए–करीम (स0अ0) रात के समय एक क़ब्र में दाख़िल हुए तो आप (स0अ0) को चिराग़ दिखाया गया और आप (स0अ0) ने मरने वाले को क़िब्ला की तरफ़ से लिया।"

मैय्यत को दफ़्न करने के एहकाम

क़ब्र में मरने वाले को किस तरह उतारा जाए?

हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ि0) से रिवायत है कि नबी–ए–करीम (स0अ0) रात के समय एक क़ब्र में दाख़िल हुए तो आप (स0अ0) को चिराग़ दिखाया गया और आप (स0अ0) ने मरने वाले को क़िब्ला की तरफ़ से लिया।"

1. मैय्यत को क़िब्ला की तरफ़ उतारना चाहिये और उसका तरीक़ा यह है कि मरने वाले की चारपाई या जनाज़ा क़ब्र के क़िब्ला की तरफ़ रख दिया जाए और मरने वाले को उसी की तरफ़ से उठाकर क़ब्र से मरने वाले को पकड़ने वाला क़िब्ला रुख़ हो जाएगा।

2. क़ब्र में मैय्यत उतारने वाले ये दुआ पढ़ते रहेः

(बिस्मिल्लाह! अल्लाह के नाम और रसूलल्लाह (स0अ0) की मिल्लत पर)

या पढ़ेंः

(अल्लाह के नाम से और नबी करीम (स0अ0) के तरीक़े के अनुसार)

3. मरने वाले को क़ब्र में उतारने वाले सम संख्या में

भी हों सकते हैं और विषम संख्या में भी हो सकते हैं। लेकिन सवाब इसमें है कि वो नेक, भले, ताक़तवर और अमानतदार हों।

4. मुस्तहब यह है कि औरतों को उतारने वाले उनके महरम (जैसेः बाप, भाई, बेटा) हों, वे न हों तो ग़ैरमहरम रिश्तेदार उतारें। वे भी न हों तो अजनबी भी ये काम कर सकते हैं। और ऐसी स्थिति में शौहर भी यह काम कर सकता है।

5. मरने वाले को क़ब्र में दाहिनी करवट पर रख कर क़िब्ला रुख़ कर देना सुन्नत है। सिर्फ़ मुंह क़िब्ला की तरफ़ करना काफ़ी नहीं है पूरे बदन को ठीक से करवट देना चाहिये।

6. और इसके बाद वह गांठ खोल देनी चाहिये जो कफ़न खुल जाने के डर से लगा दी थी।

7. औरत को दफ़न करते समय क़ब्र के ऊपर चादर वग़ैरह तानकर पर्दा कर देना सवाब के योग्य है और अगर मरने वाले के बदन के ज़ाहिर हो जाने की सम्भावना हो तो पर्दा करना वाजिब होगा। मर्द पर आम हालात में चादर वग़ैरह नहीं तानी जाएगी। यद्यपि यह कि बारिश या ओला जैसा कोई कारण हो।

8. क़ब्र अगर बग़ली है तो उसको कच्ची ईंट या नरकुल से बन्द करना चाहिये, पक्की ईंट और लकड़ी के तख़्तों का प्रयोग मना व मकरूह है। अल्बत्ता ज़मीन की नर्मी की वजह से क़ब्र के बैठ जाने की सम्भावना हो तो पक्की ईंट या लकड़ी का प्रयोग जाएज़ है और अगर क़ब्र शक़ (सन्दूक़ी) हो तो उसमें भी लकड़ी के तख़्तो का इस्तेमाल जाएज़ है।

9. कई लोग क़ब्र के अन्दर किसी दीवार पर ताक़ बनाकर उसमें अहदनामा या शिजरह वग़ैरह रखते हैं। इसका सुबूत फ़िक़्ही किताबों या हदीसों में नाचीज़ को नहीं मिला और यह कि फ़ुक़्हा ने कफ़न वग़ैरह पर तल्वीस के अन्देशे से कुछ लिखने से मना किया है। वह ख़राबी यहां भी है, अतः इससे बचना चाहिये।

10. कई इलाक़ों में क़ब्र को बन्द करने से पहले उसमें केवड़ा या आब–ए–ज़मज़म छिड़कने का रिवाज है। इसका सुबूत भी फ़िक़्ही किताबों में नहीं मिलता। इसलिये दीनी हुक्म समझ कर इसे नहीं करना चाहिये।

11. कई इलाक़ों में क़ब्र को तख़्ते से बन्द करने के बाद तख़्तों के ऊपर कुछ मिट्टी डाल देने के बाद बबूल की शाख़ डालने का प्रचलन है, तो ध्यान रहे कि अगर मक़सद तख़्तों के बीच रह जाने वाली जगह का बन्द करना है तो ये काम किसी लकड़ी से भी हो सकता है, इसलिये बबूल की लकड़ी का इहतिमाम करने की आवश्यकता नहीं है।

और अगर इसको इस मौक़े का शरई हुक्म समझ कर रखा जाता है, तो ध्यान रहे कि किताबों में इसका कोई ज़िक्र नही है। हां! अगर इसके रखने का मक़सद ये है कि इसके कांटों की वजह से जानवर क़ब्र न खोद पायेगें तो जिन इलाक़ों में जानवरों की तरफ़ से यह ख़तरा हो तो वहां बबूल या किसी और कांटे दार पेड़ की टहनी रख सकते हैं।

क़ब्र पर मिट्टी डालने का आदेश

हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है किः "रसूलल्लाह (स0अ0) ने एक जनाज़े की नमाज़ पढ़ी, फिर मरने वाले की क़ब्र पर आये, फिर उस पर उसके सर के सिरहाने की तरफ़ तीन बार मिट्टी डाली।"

हज़रत बिन मुहम्मद अपने वालिद से मुरसलन रिवायत करते हैं किः "नबी करीम (स0अ0) ने अपने साहबज़ादे हज़रत इब्राहीम की क़ब्र पर पानी छिड़का, और उस पर पत्थर के टुकड़े डाल दिये।"

फ़ुक़्हा के आदेश

1. सवाब इसमें है कि मरने वाले के सिरहाने से मिट्टी डालना शुरू किया जाए। हर व्यक्ति अपने दोनों हाथों से भरकर मिट्टी डाले, पहली बार डालते वक़्त कहेः (इसी ज़मीन से हमने तुमको बनाया) दूसरी बार डालते वक़्त कहेः (इसी में तुमको फिर पहुंचा देते हैं) और तीसरी बार कहे, (और उसी से निकालेंगे तुमको दूसरी बार)

2. हाथों से मिट्टी डाल लेने के बाद फावड़े वग़ैरह से भी मिट्टी डाली जा सकती है। लेकिन क़ब्र से जितनी मिट्टी निकाली गयी थी, उससे ज़्यादा अलग से डालना मकरूह है। अल्बत्ता बाहर से मामूली मात्रा में मिट्टी डालने की गुंजाइश है।

3. क़ब्र को कोहान नुमा एक बालिश की ऊंचाई में बनाना चाहिये, इसका चौकोर बनाना, या एक बालिश्त से बहुत ज़्यादा ऊंचा रखना मकरूह है यद्यपि एक बालिश्त से कुछ ज़्यादा ऊंचा रख सकता है।

4. क़ब्र तैयार हो जाने के बाद इस पर पानी छिड़कना मुस्तहब है ताकि मिट्टी उड़ न जाए।

5. मुस्तहब यह है कि दफ़नाने का काम दिन में किया जाए। इसलिये कि इसमें ज़्यादा आसानी रहती है लेकिन रात को दफ़नाना भी मकरूह नहीं होगा।

किसी की मौत समन्दरी कश्ती या जहाज़ पर सफ़र के दौरान हो जाए तो ग़ुस्ल और कफ़न दिलाकर किसी चीज़ से बदन को वज़नी कर दिया जाए और मरने वाले को समन्दर में डाल दिया जाए।

दफ़नाने के बाद क्या करें?

हज़रत अम्र बिन आस (रज़ि0) के बारे में मनकूल है कि मौत से पहले उन्होने अपने बेटे से फ़रमाया:

"जब मेरी मौत हो जाए तो मेरे साथ किसी नौहा करने वाली औरत या आग न रखना और जब मुझे दफ़न करना तो मुझ पर कुछ मिट्टी डालना फिर मेरी क़ब्र के पास इतनी देर खड़े रहना जितनी देर में ऊंट ज़िबह किये जाते हैं और उनका गोश्त बांटा जाता है ताकि मैं तुम लोगों से उन्सियत हासिल करूं जान सकूं कि मुझे अपने रब के फ़रिश्तों से क्या सवाल जवाब करना है।"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि: "नबी करीम (स0अ0) को फ़रमाते हुए सुना है कि तुममें से जब किसी की मौत हो जाए, तो मैय्यत को रोके न रहो और क़ब्र तक उसको जल्दी ले जाओ और उसके सरहाने सूरह बक़रा की शुरुआती आयत; और पैरों की तरफ़ सूरह बक़रा की आख़िरी आयत; तक पढ़ना चाहिये।"

1. मुस्तहब यह है कि दफ़नाने के बाद कुछ देर ठहर जाए (ख़ास तौर पर मरने वाले के घर वाले और उसके क़रीबी रिश्तेदार) और मरने वाले के हक़ में उसके साबित क़दम रहने की दुआ और तिलावत कुरआन करता रहे। (हदीस शरीफ़ ठहरने की जो देरी बतायी गयी है, यह काम अरब बहुत जल्द कर लिया करते थे, इसलिये अम्र बाद यह काम करना शुरू करते थे तो मग़रिब की नमाज़ से काफ़ी पहले कर लिया करते थे।

2. लेकिन दफ़नाने के बाद कोई लौटना चाहे तो मरने वाले के घर वालों की आज्ञा के बिना लौट सकता है। हां! दफ़नाने से पहले बिना आज्ञा के वापसी मना है।

क़ब्र पर इमारत वग़ैरह बनाना

हज़रत जाबिर (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि: "नबी करीम (स0अ0) ने क़ब्र को पुख़्ता करने, इस पर बैठने और उस पर कोई इमारत बनवाने से मना किया है।"

तिरमिज़ी और अबू दाऊद में यह इज़ाफ़ा भी है कि (आप (स0अ0) ने इससे मना फ़रमाया है) क़ब्रों पर लिखा जाए, उन पर इमारत बनायी जाए और उन्हे रौंदा जाए।"

हज़रत कैसर बिन ज़ैद मदनी हज़रत मुत्तलिब से एक लम्बी हदीस में रावी हैं कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने पत्थर उठाया और उन (हज़रत उस्मान बिन मज़ऊन (रज़ि0) की क़ब्र) के सिरहाने रख दिया और फ़रमाया:

"इसके ज़रिये मैं अपने भाई की क़ब्र पहचान लूंगा और मेरे घरवालों में से जिसका इन्तिक़ाल होगा, उसी क़ब्र के पास उसको दफ़न करूंगा।"

क़ब्र को पुख्ता करना, उस पर इमारत बनाना, कुबा बनाना, या क़ब्र पर कत्बा (नाम का पत्थर) लगाकर उसमें कुरआनी आयतें या शेर इत्यादि लिखना मना व मकरूह है। यद्यपि क़ब्र की पहचान के लिये अलामत के तौर पर कत्बा लगाना जाएज़ है।

क़ब्र पर चादर चढ़ाना मकरुह है।

नबी करीम (स0अ0) ने क़ब्र पर चिराग़ जलाने और उनको सज्दागाह बनाने से मना फ़रमाया है।

इसी तरह आप (स0अ0) ने क़ब्र पर बैठने से मना फ़रमाया है।

मिट्टी डाल देने के बाद मरने वाले को क़ब्र से निकालना मना है, यद्यपि यह कि किसी आदमी का हक़ मारा जा रहा हो, जैसे ज़मीन किसी और की हो या कफ़न ग़ज़ब करदा कपड़े का दिलाया गया हो, या एक दिरहम (3ग्रा0 62मि0ग्रा0 चांदी) का कोई सामान दफ़न हो गया हो।

अगर बग़ैर नहलाए या बग़ैर नमाज़–ए–जनाज़ा पढ़ाए दफ़न कर दिया गया हो या बाएं करवट लिटा दिया गया हो या क़िब्ला रुख़ न हो तो क़ब्र नहीं खोदी जाएगी। हां! अगर अभी केवल तख़्ते ही बराबर किये थे, मिट्टी नहीं डाली थी तो रुख़ सही कर देना चाहिये।

क़ब्रों पर से घास–फूस उखाड़ना मकरूह है। यद्यपि घास अगर सूखी हो तो साफ़ करने में कोई हर्ज नहीं है। इसलिये कि जब तक वो हरी रहती है, अल्लाह का ज़िक्र करती रहती है, और इससे मरने वाले को राहत मिलती है।

मुहर्रम के महीने की बिदअतें

ग़म का महीना समझना:

अल्लाह के रसूल स0अ0 ने यह बात साफ़ तौर पर बता दी है: "तुम किसी मैय्यत पर तीन दिन से ज़्यादा ग़म न मनाओ, सिवाए औरत के कि वह अपने शौहर पर चार महीने दस दिन तक शोक मनाएगी।"

ताज़िया दारी:

शियों की मज़हबी किताब "मन ला यहज़रह अल फ़क़ीह" में हज़रत अली रज़ि0 का यह जुम्ला लिखा है: "जो शख़्स किसी क़ब्र को फिर से बनाए या उसकी शक्ल व शबीह (ताज़िया) बनाए तो वह इस्लाम से ख़ारिज है।"

मातम व नौहा पढ़ना:

नबी करीम स0अ0 ने खुले लफ़्ज़ों में फ़रमाया: "वह शख़्स हममें से नहीं जो चेहरों को पीटे, गिरेबान को फाड़े और जाहिलों की तरह वावेला मचाए।"

मर्सिया पढ़ना:

इब्ने माजा की रिवायत है आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया: "नबी करीम स0अ0 ने मुर्दों के मुहासिन बयान करके रोने से मना फ़रमाया है।"

काला कपड़ा पहनना:

हज़रत अली रज़ि0 का क़ौल है: "मेरे दुश्मनों का लिबास न पहना करो, हुज़ूर स0अ0 के दुश्मनों का लिबास काला है।"

ढोल–ताशा बजाना:

रसूलुल्लाह स0अ0 ने इरशाद फ़रमाया: "गाना–बजाना दिल में निफ़ाक़ का बीज बो देता है।

ईसाल–ए–सवाब:

हज़रत शाह अब्दुल अज़ीज़ रह0 ने इन ख़ास दिनों में ईसाल–ए–सवाब के बारे में लिखते हैं: "इन्सान को अख़्तियार है कि अपने अमल का सवाब बुज़ुर्गों को पहुंचाए, लेकिन इस काम के लिये कोई वक़्त, दिन और महीना तय करना बिदअत है।"

मजलिसों का आयोजन:

अल्लामा अब्दुल हयि लखनवी रह0 लिखते हैं: "जामेउर्ररुमूज़" के हवाले से नक़ल करते हैं: "अगर क़त्ले हुसैन रज़ि0 के तज़किरे का इरादा हो तो उससे पहले तमाम सहाबा का ज़िक्र होना चाहिये ताकि रवाफ़िज़ के साथ समानता न रहे।

सबील लगाना:

हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही रह0 लिखते हैं: "मुहर्रम में ज़िक्र–ए–शहादते हुसैन अलै0 करना अगरचे सही रिवायत हो, या सबील लगाना या शरबत पिलाना, सबील या शरबत लगाने में चन्दा देना, या दूध पिलाना सब अनुचित और रवाफ़िज़ से समानता की वजह से हराम है।"

खिचड़ा पकाना:

खिचड़ा पकाना ख़्वारिज व नवासिब की अलामत है जो हज़रते हुसैन की शहादत के दिन अपनी ख़ुशी के इज़हार के लिये पकाते थे। मशहूर किताब "अलबिदाया वन्निहाया" में लिखा है: शाम (सीरिया) में रहने वाले नासिबी लोगों ने रवाफ़िज़ व शिया हज़रात की मुख़ालिफ़त की, इसलिए वह आशूरा के दिन मुख़्तलिफ़ क़िस्म के ग़ल्लों का पकवान बनाते थे और अच्छे कपड़े पहनते थे। इस दिन को ईद की तरह मनाते थे, इसीलिए इस दिन तरह–तरह के खाने तैयार करते थे, जिससे वह अपनी ख़ुशी का इज़हार करते थे।"

साज–सज्जा छोड़ना:

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह0 इस माह में साज–सज्जा छोड़ने के बारे में लिखते हैं: इन दिनों में जानबूझकर छोड़ देना, जिसको शोक कहते हैं, और इसका शरीअत में हुक्म है कि औरत को सिर्फ़ पति पर चार माह दस दिन या बच्चे की पैदाइश तक वाजिब है और दूसरे अज़ीज़ों के मरने पर तीन दिन जायज़ है बाक़ी हराम, सो अब तेरह सौ साल बाद यह काम करना निसंदेह हराम है।"

पस्ती का कोई हद से गुज़रना देखे

अज़ीज़ुल हसन सिद्दीक़ी

सारे आलम में अगर कोई क़ौम रुस्वा और ज़लील है तो हम हैं। हर जगह हम ही हैं जो मारे और काटे जा रहे हैं। यूं तो हर ज़माने में हमें आज़माइश में डाला गया है 9/11 की घटना के बाद तो यूरोप, अमरीका और इस्राईल को खुली छूट मिल गयी है जैसे चाहें हमें तबाह व बर्बाद करें, हमारी जान हलाक करें, लाशों को मसला करें, कोई उनका हाथ पकड़ने वाला नहीं है। अजीब बात यह है कि दूसरे भी हमें मार रहे हैं और हम ख़ुद आपस में लड़ भी रहे हैं और मार–काट कर रहे हैं। वतन–ए–अज़ीज़ हिन्दुस्तान में हमारे साथ सुलूक हो रहा है, वह भी सामने है।

सवाल यह है कि हमारे ही साथ ऐसा क्यों हो रहा है। अगर हम संजीदगी के साथ तन्हाई में बैठकर सोचेंगे तो हमें जवाब मिल जाएगा कि मौजूदा तबाही और नुक़सानात के ज़िम्मेदार हम ख़ुद हैं। यूं भी कह सकते हैं कि हमने आलाम व मसाएब को दावत दी है। ख़ैर व फ़लाह की कलीद हमें दी गयी थी, मगर हम उसकी हिफ़ाज़त न कर सके। हमने अमानत का हक़ अदा न किया इसलिए वह हमसे छीन ली गयी। हमें एक बड़ी नेमत से महरूम कर दिया गया। हमें ख़ैर उम्मत के लक़ब से नवाज़ा गया था और मारूफ़ का हुक्म करने और लोगों को मुनकिरात से बचाने की ज़िम्मेदारी दी गयी थी मगर हमने अपने मन्सब को भुला दिया और ज़िल्लत व रुस्वाई के गढ़े मे जा गिरे।

हमें ला मुहाला सोचना पड़ेगा कि माज़ी में हम क्यों बाइज़्ज़त व बामुराद थे। दुनिया क्यों हमारा एहतिराम करती थी और आज क्यों हमसे दूर भाग रही है और हमें क्यों मारा और सताया जा रहा है। हम कुरआन पढ़ तो लेते हैं लेकिन कुरआन हमसे क्या कहता है और किन चीज़ों का मुतालबा करता है उससे हम वाक़िफ़ नहीं हैं। अगर हम कुरआन से शग़फ़ रखते और उसको हर्ज़े जां बनाते तो यक़ीनन वह हमें जीने का गुण बताता। हमारी रहनुमाई करता और हमें कारे मुज़ल्लत में गिरने से बचाता मगर हमने इसे जुज़्दान में लपेट कर रख दिया और बोसा देने को काफ़ी समझ लिया। कुरआन का ऐलान है "तुम ही ग़ालिब रहोगे, अगर तुम मोमिन हो" लेकिन सवाल यह है कि क्या हम कुरआन की शर्तें पूरी करते हैं। क्या हमने अपनी 0ड्यूटी पूरी की। ज़ाहिर है कि हमने मोमिनाना किरदार अदा किया होता और मोमिनाना सिफ़ात अपने अन्दर पैदा की होती तो आज हमें ज़िल्लत व रुस्वाई का सामना न करना पड़ता और दुनिया की सारी क़ौमें माज़ी की तरह हमें हाथों हाथ लेती लेकिन हो क्या रहा है हमें बेवतन किया जा रहा है। हमारा अपने घरों में रहना दुश्वार हो गया है। दर–दर की ठोकरें खाना मुक़द्दर बन गया है। जहां जाते हैं दरवाज़े बन्द पाते हैं। बेशक फिलिस्तीन में यहूदी हमें मार रहा है और सता रहा है लेकिन इराक़ व शाम में और अफ़्रीक़ा में तो मुसलमान ही मुसलमान को मार रहा है और लाखों लोग जाए पनाह की तलाश में मारे–मारे घूम रहे हैं।

हम हिन्दी मुसलमानों से सवाल करना चाहते हैं कि क्या तुम्हारी बुलन्द व बाला इमारते और पुरतकल्लुफ़ ज़िन्दगी तुम्हें वतने अज़ीज़ में बाइज़्ज़त व बवक़ार बना सकती हैं। स्पेन में तो सबकुछ मौजूद था फिर क्यों तुम वहां से बेदख़ल किये गये। ज़ाहिर है कि स्पेन में हमने ख़ैर उम्मत वाला किरदार अदा नहीं किया था इसलिए खदेड़ दिये गये और यहां भी हमारा किरदार दाग़दार है।

ड्यूटी छोड़कर भागने वाला सिपाही भगोड़ा कहलाता है और मस्तूजब सज़ा होता है। हमें अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि हम अपनी ड्यूटी से ग़ाफ़िल हैं इसीलिए हम मुंह छिपाते फिर रहे हैं। हम अम्र बिल मारूफ़ व नहीं अनिल मुनकर की ड्यूटी सौंपी गयी थी और उस ड्यूटी को बाअहसन व जोह अन्जाम देने की सूरत में ख़ैर उम्मत का लक़ब भी अता किया गया था मगर हमने इस ड्यूटी को अंजाम देने में कोर कसर की इसलिए आज़माइशों में डाल दिये गये।

दुनिया मुतलाशी है अस्ली मुसलमान की जबकि असली मुसलमान ना पैदावारे नस्ली मुसलमान क़दम–क़दम पर नज़र आ रहा है, पस ज़रूरत इस बात की है कि हम अस्ली मुसलमान बन जाएं फिर देखिए दुनिया हमें हाथोंहाथलेती है या नहीं। हम चीख़–चीख़ कर ऐलान करते हैं कि हमें रसूलुल्लाह स0अ0 से बहुत मुहब्बत है और हम यह भी कहते हैं कि नबी का दामन नहीं छोड़ेंगे लेकिन क्या कोई दावा कर सकता है कि

उसके शब व रोज़ के सारे आमाल रसूलुल्लाह स0अ0 के उस्वा व तरीक़ के मुताबिक़ हैं वह शादी करते वक़्त क्या यह मालूम करने की कोशिश करता है कि आप स0अ0 किस तरह शादी करते थे उस तरह क्या हम अपनी जिन्दगी के दूसरे तमाम मशाग़िल व मामलात में कभी यह देखते हैं कि आप स0अ0 ऐसे मौक़ों पर क्या करते थे।

याद रखिये दुनिया हमारी इबादात को नहीं बल्कि मामलात को देखती है। इबादात माशाअल्लाह ख़ूब हो रही है, मगर मामलात अच्छे नहीं है। तफ़सील में जाने की ज़रूरत नहीं है। हर शख़्स अपने गिरेबान में मुंह डालकर सोचे कि हम क्या थो और क्या हो गये। कलेजे पर हाथ रखकर सोचे कि रसूलुल्लाह स0अ0 और सहाबा किराम रज़ि0 को जिन हालात से गुज़रना पड़ा क्या हमें भी उन्हीं हालात से दो–चार होना पड़ रहा है। फिर क्यों हम बताशे की तरह घुलते जा रहे हैं।

ज़रूरत इस बात की है कि हम अपने मामलात व मामूलात में तब्दीली लाएं। अपनी इन्फ़िरादी और इज्तिमाई ज़िन्दगी को संवारे। घर के अन्दर और घर के बाहर आला अख़लाक़ का मुज़ाहिरा करें। अहले व अयाल के साथ भी अच्छा बर्ताव करें और मुहल्ला व पड़ोस वालों के साथ भी मुहब्बत व ख़ुलूस के साथ पेश आएं। उनके दुख–दर्द को अपना दुख–दर्द समझें। उनकी ख़ुशी और ग़मी में शरीक हों, ख्वाह वह ग़ैर मस्लिम ही क्यों न हों।

एक बीन आला क़वामी साज़िश के तहत के हमें दुनिया भर में दहशतगर्द मशहूर कर दिया गया है, ऐसा क्यों है?इसके मुज़म्मरात पर ग़ौर करने और इस इल्ज़ाम को ग़लत साबित करने की ज़रूरत है। "बहारे अरब'' का दूर–दूर तक कहीं पता नहीं चलता। यूरोपियन दिमाग़ ने इसका रुख़ मोड़ दिया है और फ़र्ज़ी इस्लामी तंज़ीमें खड़ी कर दी हैं। वतन अज़ीज़ में हमारे साथ जो कुछ हो रहा है इसमें बैरूनी साज़िशों का भी हिस्सा है इसलिए हमें जोश व हैजान के बजाए होश–गोश से काम लेना चाहिये। अगर हम अपने इस्लाफ़ के सवानेह और कारनामों की तारीख़ पर नज़र डालेंगे तो हमें अपने ज़ाहिरी और पोशीदा सीभी अमराज़ का इलाज मालूम हो जाएगा। और अगर हमने ख़ुदा न ख़्वास्ता बिसाते सियासत के बिछे हुए मोहरों से मदद ली तो तबाही के सिवा कुछ हाथ नहीं आने वाला।

शेष: दीनी सरहदों की हिफ़ाज़त

दुनिया में जो चीज़ें असर डालती हैं और उनके जो नताएज होते हैं, तालीमी ताक़त, लिसानी ताक़त, अदबी ताक़त, क़ानूनी ताक़त और हुकूमती ताक़त के असरात व नताएज हमने देखे हैं। लेकिन दीनी तालीम के बिना मिल्लते इस्लामिया, उम्मते इस्लामिया बनकर हिन्दुस्तान में नहीं रह सकती है। इसलिए हरक़ीमत पर अपने बच्चों को भूगोल पढ़ाइये, इतिहास और साहित्य पढ़ाइये, साइंस और गणित पढ़ाइये लेकिन पहली और बुनियादी शर्त यह है कि उसके साथ–साथ दीन की भी तालीम दीजिए। मस्जिद–मस्दिज और घर–घर उसका इन्तिज़ाम होना चाहिये। उसकी तालीम को खूब चलाइये, अगर दीन की तालीम को आप भुलाइयेगा नहीं, उसको दबाकर बक्स में बंद करके रखियेगा तो फिर उसके लिये ख़तरा पैदा हो जाएगा कि कहीं कोई डाकू आकर डाका न डाल दे। लेकिन अगर आपने अपने पास के माहौल को सही रखा, दूसरों को भी इस दौलत में शरीक करेंगे, तो दूसरे भी उसको अज़ीज़ रखेंगे और उसकी सरहदों की हिफ़ाज़त करेंगे।

अब जो ज़माना आ रहा है वह नया ज़माना है। इसमें नये इन्तिख़ाबात होंगे। नई हुकूमत बनेगी और जो लोग हुकूमत बना सकते हैं वह क़ानून भी बना सकते हैं। इसलिए मुसलमानों को नये ख़तरो और नये चैलेंजो का मुक़ाबला करने के लिये तैयार रहना होगा, और दूसरों को भी सब्र व इस्तिक़ामत की तलक़ीन व तरग़ीब देनी होगी। अगर हमने इख़्लास व इस्तिक़ामत का सुबूत दिया और खुदा को हाज़िर व नाज़िर जानकर सारे काम किये, तो कामयाबी हमारे क़दम चूमेगी, लेकिन अगर मुसलमानों ने दीनी तालीम के मामले में कोताही की तो मुसलमान–मुसलमान बनकर इस मुल्क में नहीं रह सकते, किसी और चीज़ का ख़तरा हम नहीं बताते, खाने को भी मिलता रहेगा, जानवरों को भी मिलता है, ग़ैर मुस्लिम भी आपसे अच्छा खाते हैं, लेकिन अल्लाह और उसके रसूल के यहां आप मुसलमान नहीं समझे जाएंगे, और इस्लाम और मुसलमानों के दफ़्तर में आपका नाम नहीं लिखा जाएगा।

अल्लाह का फ़ैसला

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हदीसः हज़रत अनस रज़ि0 से रिवायत है; अल्लाह के रसूल स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः मुसीबत जितनी बड़ी होती है अज्र भी उतना ही बड़ा होता है। और जब अल्लाह किसी क़ौम से मुहब्बत करता है तो (कभी) उनको आज़माता है, लिहाज़ा जो आदमी उस पर राज़ी रहा उसे ख़ुशनूदी हासिल हुई और जो उससे नाराज़ हुआ वह अल्लाह की नाराज़गी में जा पड़ा।

फ़ायदाः ईमान वालों की अस्ल मंज़िल रब की ख़ुशनूदी है, लेकिन उसको पाने का तरीक़ा बहुत ही मुश्किल है। इसमें भूखे रहने तक की नौबत भी आती है और मुसीबत व परेशानी का सामना भी होता है। शरीअत के हुक्म की पाबन्दी भी है और ख़ुदा व रसूल से निस्वार्थ भाव का प्रेम भी। जब इस राह का मुसाफ़िर अल्लाह के सामने पूरी तरह से सर झुका देता है तो और हर मुसीबत पर रब की ख़ुशनूदी का ख़्वाहिशमंद रहता है। हर तकलीफ़ को क़ुबूल करता है और अपनी ज़बान पर शिकायत का हर्फ़ भी नहीं लाता है तो उसकी हर मुसीबत अज्रे अज़ीम में बदल जाती है और इस तरह अल्लाह की ख़ुशनूदी हासिल करना आसान हो जाता है।

ख़ुद के हर फ़ैसले पर बख़ूबी रज़ामन्दी को "रज़ा बिल क़ज़ा" कहते हैं और यह ईमान का एक अहमतरीन हिस्सा है। ख़ुद की सुन्नत यह रही है कि जो लोग उससे ज़्यादा क़रीब होते हैं उसकी आज़माइश और इम्तिहान भी उतना ही सख़्त होता है, ताकि उससे क़रीब बन्दों के सब्र के पैमाने मुहब्बत के जज़्बे का ख़ुलूस निखर कर सामने आ जाए। एक हदीस में है कि सबसे ज़्यादा मुसीबत का सामना करने वाले नबी होते हैं, फिर वह लोग जो उनसे क़रीब हों। लेकिन यह भी हक़ीक़त है कि ऐसे साहबे ईमान व अज़ीमत की कोई मुश्किल दर्जों के अल्लाह के यहां बढ़ने से ख़ाली नहीं जाती। हदीस पाक में आता है कि अगर किसी मोमिन के सर में दर्द हो या मामूली कांटा भी चुभ जाए तो अल्लाह तआला उसके गुनाह माफ़ करते हैं और दरजात बुलन्द करते हैं, अलबत्ता इन तमाम नवाज़िशों की बुनियाद "रज़ा बिल क़ज़ा" है। यानि इन्सान अल्लाह तआला का हर फ़ैसला बिला तरद्दुद अपने हक़ में ख़ैर तसव्वुर करे। लिहाज़ा जितनी बड़ी मुसीबत होगी, वैसी ही जज़ा भी होगी और उसी क़द्र अल्लाह की ख़ुशनूदी का हुसूल भी मुमकिन होगा, ऊपर दी गयी हदीस इसकी खुली हुई दलील है।

अल्लाह तआला के तमाम फ़ैसलों पर रज़ामंदी की ख़ूबी मज़बूत ईमान व यक़ीन की पहचान है, जिसका हुसूल अल्लाह के ज़िक्र, नफ़्स का तज़किया और नेक सोहबत के बिना मुश्किल है। अल्लाह तआला के फ़ैसलों पर रज़ामन्द फ़ायदे हैं, जिनमें सबसे बुनियादी फ़ायदा यह है कि इन्सान दुनिया से बेनियाज़ हो जाता है। दुनिया के झमेलों से आसानी से गुज़र जाता है। हर कड़वे घूंट को अल्लाह की मर्ज़ी समझकर पी जाता है और इन्तिहाई सब्र आज़मा हालात में भी अपने इरादे पर डटा रहता है, जिसका लाज़मी नतीजा पैकर–ए–हयात व शुजाअत की शक्ल में रौनुमा होता है।

अल्लाह तआला की तय की हुई हदों पर टिप्पणी, उसकी ज़ात पर अविश्वास, और उसके फ़ैसलों पर शिकवा करना, मुसीबत के मौक़े पर सब्र के इज़हार के बजाए ज़बान दराज़ करना, थोड़ी मुसीबत पड़ने पर ही मौत की तमन्ना करना, और मुजस्सम बेसब्री और परेशानी बन जाना ईमान के ख़िलाफ़ बातें हैं और ख़ुदा की ख़ुशनूदी से दूर करने वाली ख़सलते हैं, जो इन्सान को ईमानी हलावतों के ज़ाएक़े से महरूम रखती हैं।

हदीसों और बुज़ुर्गों के अमल से मालूम होता है कि अल्लाह के फ़ैसलों पर रज़ामन्दी भी बड़ी नेमत है। नबी करीम स0अ0 से नक़ल की हुई दुआएं उसकी गवाह हैं। एक मौक़े पर आप स0अ0 ने फ़रमायाः ऐ अल्लाह! मैं तुझसे ऐसे नफ़्स–ए–मुतमइन्ना का तालिब हूं, जो तेरी मुलाक़ात का यक़ीन रखता हो, तेरे फ़ैसलों पर राज़ी हूं, जो तेरी मुलाक़ात का यक़ीन रखता हो, तेरे फ़ैसलों पर राज़ी हो, और तेरे उपकारों पर संतुष्ट हो।

मौजूदा दौर में "रज़ा बिल क़ज़ा" का जौहर नायाब है और ज़्यादातर लोगों की ज़बान शिकवा–शिकायत से भरी है, जिसमें बड़ी हद तक फ़िल्मी दुनिया की करम फ़रमायी भी शामिल है, जहां बात–बात पर अपने माबूद से लड़ने और बसह व मुबाहिसे को अच्छे अंदाज़ में पेश किया जाता है और नई नस्ल इसी अंदाज़ की तक़लीद को दानिशवरी का तक़ाज़ा समझती है।

आसाम और एन सी आर

(National Register of Citizen)

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

आसाम; भारत के उत्तरपूर्व के उन सात राज्यों में से एक है जिन्हें "Seven sisters of east" कहा जाता है। इन राज्यों की सीमाएं कई देशों से मिलती हैं तथा भारत की "असुरक्षित सीमाएं" कहलाती हैं। इसलिए बंग्लादेश, भूटान, नेपाल तथा बर्मा यहां तक कि चीन तक के लोगों का इन राज्यों में प्रवेश कर जाना कोई असाधारण बात नहीं है। आसाम की कुल आबादी लगभग सवा तीन करोड़ है जिसमें 33 प्रतिशत मुसलमान हैं। इन मुसलमानों का सबसे बड़ा जुर्म मुसलमान होना तथा बंग्ला भाषा बोलना है।

1905 ई0 में अंग्रेज़ों ने बंग्लादेश को पूर्वी व पश्चिमी बंगाल के रूप में दो भागों में बांट दिया। फिर आसाम और पूर्वी बंगाल को जोड़कर एक नये राज्य का निर्माण किया। अंग्रेज़ों के समय में चाय के बाग़ो तथा खेती के लिये विभिन्न राज्यों विशेष रूप से बंगाल तथा बिहार से लोग आसाम आते–जाते थे। इस दौरान बहुत से लोग वहां स्थायी रूप से रहने लगे और वहीं के नागरिक हो गये।

1947 ई0 में भारत को अंग्रेज़ों से स्वतन्त्रता प्राप्त हुई जिसकी क़ीमत उसे बंटवारे की शक्ल में अदा करनी पड़ी तथा भारत के पहलू से एक नया देश अस्तित्व में आया जिसे पाकिस्तान कहते हैं।

अंग्रेज़ी बंटवारे ने पाकिस्तान को भी दो हिस्सों में बांट दिया। एक पूर्वी पाकिस्तान तथा एक पश्चिमी पाकिस्तान। बंटवारे के समय इस बात की प्रबल संभावना थी कि पूर्वी बंगाल के साथ आसाम का क्षेत्र भी पाकिस्तान को दे दिया जाए। अतः गोपी नाथ बोर्डोली के नेतृत्व में आसाम क्रान्ति का आरम्भ हुआ जो आसाम की रक्षा में सफल रहा, यद्यपि इस बंटवारे के बाद आसाम में आबाद हुए लोग "पाकिस्तानी" हो गये।

पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान में धर्म तथा मानवता के सिवा कोई भी चीज़ समान नहीं थी, अतः पहले ही दिन से दोनों के संबंध तनावपूर्ण रहे तथा दोनों आन्तिरक अव्यवस्था तथा गृहयुद्ध में पड़कर अस्थिर थे। हालात उस समय ज़्यादा ख़राब हो हुए जब पूर्वी पाकिस्तान में भाषा के झगड़े ने जन्म लिया और पूरा देश दंगों की आग में जल उठा। हालात इतने अनियन्त्रित हो गये कि वहां के हिन्दु–मुस्लिम दोनों ही वर्गों की एक बड़ी आबादी ने आसाम और पश्चिमी बंगाल का रुख़ किया।

1971 ई0 में पाकिस्तान की सेना ने पूर्वी पाकिस्तान में हिंसक तथा अत्याचारपूर्ण कार्यवाहियां आरम्भ की। इस समय भारत तथा पूर्वी पाकिस्तान के संबंध बहुत मज़बूत तथा परस्पर सहयोग पर आधारित थे। अतः पाकिस्तानी सेना के ख़िलाफ़ भारत ने अपनी सेना मैदान में उतार दी। एक निर्णायक जंग हुई जिसमें पाकिस्तान को न केवल हार का सामना करना पड़ा बल्कि पूर्वी पाकिस्तान को स्वायत्ता भी प्राप्त हुई। इस प्रकार भारत की प्रभावपूर्ण सैन्य कार्यवाही ने मध्यपूर्व के नक़्शे में एक नये देश की बढ़ोत्तरी कर दी जिसे "बंग्लादेश" कहा जाता है। यद्यपि इस युद्ध के परिणामस्वरूप लाखों लोगों ने सीमापार करके आसाम में शरण ली। इस तरह 1905ई0 से लेकर 1971ई0 तक एक बहुत बड़ी संख्या आसाम की निवासी हो गयी जिनमें से कुछ का संबंध बंगाल तथा बिहार से जबकि अधिकतर का संबंध बंग्लादेश से था।

कश्मीर के बाद आसाम ही एक ऐसा राज्य है जहां मुस्लिम आबादी सबसे ज़्यादा है। बहुत से ज़िले ऐसे भी हैं जहां मुसलमान बहुसंख्यक हैं, जिसमें विशुद्ध आसामी नागरिक भी शामिल हैं तथा यह ज़िले असम की राजनीति को सीधे तौर पर प्रभावित करते हैं। यही वह आधारभूत कारण है जिसने वहां के हिन्दुओं को मुसलमानों से नफ़रत पर उभार दिया और राजनेताओं ने उनके अन्दर भाषाई, सांस्कृतिक तथा राजनीतिक असुरक्षा की भावना पैदा कर दी। फिर पूर्व नियोजित योजना के तहत यह बनाया गया कि ज़्यादातर बंगाली मुसलमान ग़ैर क़ानूनी रूप से असम में आबाद हैं, अतः मतदाता सूची से उनके नाम हटा दिये जाएं।

1978ई0 में बंगाली मुसलमानों के ख़िलाफ़ एक ज़बरदस्त अभियान आरम्भ हुआ जिसका नाम आसाम अभियान या आसाम ऐजीटेशन था। इस अभियान का नेतृत्व "ऑल आसाम स्टूडेंट यूनियन" तथा "आल आसाम गान संग्राम परिषद" नामक कट्टरवादी हिन्दु संस्थान कर रहे थे। अभियान के आक़ाओं ने सरकार से मांग की

कि वह आसाम की सीमाओं को सील कर दे तथा 1961ई0 के बाद से राज्य में जितने भी लोग आए हैं उनकी पहचान करके उनको राज्य से बाहर कर दे। सरकार ने उनकी मांग को दरकिनार करते हुए उस समय के सारे लोगों को वोटर लिस्ट में शामिल कर लिया।

1983ई0 में आसाम में एसेम्बली चुनाव की घोषड़ा हुई। आंदोलन से जुड़ी संस्थाओं ने उसका बायकाट किया, यद्यपि चुनाव हुए लेकिन जिन क्षेत्रों में आसामी भाषा के लोगों की अधिकता थी, वहां तीन प्रतिशत वोट पड़े। इस दौरान आसाम में आदीवासी, भाषाई तथा साम्प्रदायिक पहचान के नाम पर ज़बरदस्त फ़साद हुए। इन फ़सादों में "नीली नरसंहार" की घटना ने पूरे देश को हिलाकर रख दिया।

18 फ़रवरी 1983ई0 को सुबह के समय ज़िला "नागांव" के क़स्बा "नीली" समेत चौदह गावों में मौत का नंगा नाच हुआ। मुसलमानों को ज़िन्दा जलाया गया। उनकी हत्या की गयी और जो बच–बचाकर वहां से भागे उनमें से बहुत से नदी में डूबकर मर गये। इसी नरसंहार में लगभग पांच हज़ार मुसलमानों को मौत के घाट उतार दिया गया। यह स्वतन्त्र भारत का सबसे बड़ा नरसंहार था। इस प्रकार यहां के सोलह संसदीय क्षेत्रों में चौदह संसदीय क्षेत्रों में चुनाव नहीं हो सके।

1979ई0 से लेकर 1985ई0 तक आसाम में राजनीतिक अस्थिरता रही। कांग्रेस की सरकार भी बनी तथा राष्ट्रपति शासन भी रहा। इस आन्दोलन ने कई बार हिसंक रूप अपनाया। आन्दोलनकारियों तथा सरकार के बीच बातचीत जारी रही लेकिन किसी भी तरह समस्या का समाधान न हो सका, क्योंकि यह बहुत गंभीर समस्या थी। यह तय करना आसान न था कि कौन बाहरी या विदेशी है और ऐसे लोगों को कहां भेजा जाना चाहिये। अन्त में लम्बी कशमकश तथा बातचीत के बाद 1985ई0 को केन्द्र सरकार तथा आसाम आन्दोलन के मध्य एक समझौता हुआ जिसे "आसाम समझौता" कहा जाता है। इस समझौते के तहत 1951ई0 से लेकर 1961ई0 के मध्य तमाम लोगों को सम्पूर्ण नागरिकता देने तथा वोट देने का अधिकार दिया गया और यह तय किया गया कि 1971ई0 के बाद जो लोग आएं हैं उन्हें वापस भेज दिया जाए, 1961ई0 से 1971ई0 के मध्य जो लोग आएं हैं उन्हें वोट देने का अधिकार तो नहीं दिया गया लेकिन उन्हें नागरिकता दी गयी। 15 अगस्त 1985ई0 को उस समय के प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने लाल किले की प्राचीर से "आसाम समझौते" की घोषणा की गयी।

आज़ादी के बाद 1951ई0 में आसाम में पहली जनगणना हुई थी। जिसे एन.सी.आर. (नेशनल रजिस्ट्रेशन ऑफ़ सिटिज़ेन) यानि "नागरिकों का राष्ट्रीय रजिस्टर" कहा जाता है। इसके बाद यह सिलसिला जारी रहा। फिर अंतिम जनगणना 1981 ई0 में हुई।

1985ई0 में जो "आसाम समझौता" हुआ था उस पर पुर्नविचार का काम 1999ई0 की उस समय की बीजेपी सरकार ने शुरू किया तथा 17 नवम्बर 1999ई0 को सरकार ने समझौते के तहत एन.आर.सी. को अपडेट करने का आदेश दिया। इसके लिये बीस लाख रूपये का फ़न्ड अलाट किया गया, जिसमें से पाच लाख जारी भी कर दिये गये लेकिन इस आदेश पर कोई कार्यवाही न हो सकी और इसे ठन्डे बस्ते में डाल दिया गया।

2013ई0 में "आसाम पब्लिक वर्क" नामक एन.जी.ओ. समेत कई दूसरी संस्थाओं ने इस मुद्दे को लेकर सुप्रीम कोर्ट में जनहित याचिका दायर की। अतः 2013–2017 ई0 तक के चार सालों के दौरान इस मुद्दे पर चालिस सुनवाइयां हुईं जिसके बाद नवम्बर 2017 में आसाम सरकार ने सुप्रीम कोर्ट को विश्वास दिलाया कि 31 दिसम्बर 2017 तक सरकार नये सिरे से एन.आर.सी. तैयार कर लेगी, हालांकि इसके बाद और समय की मांग की गयी और फिर जुलाई 2018 में फ़ाइनल ड्राफ़्ट प्रस्तुत किया गया।

सरकार ने एन.आर.सी का जो अन्तिम प्रारूप प्रस्तत किया है, उसमें लगभर 40 से 41 लाख मुसलमानों के नाम शामिल नहीं हैं। यद्यपि गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने यह ऐलान किया है कि जिनका नाम एन.आर.सी. में शामिल नहीं हैं उन्हें उनकी नागरिकता साबित करने का पूरा मौक़ा दिया जाएगा। सर्वोच्च अदालत की नज़र में यह भी अन्तिम रिपोर्ट नहीं है तथा चुनाव आयोग ने भी इस बात को स्पष्ट किया है कि जिनके नाम इस सूची में शामिल नहीं हैं, उन्हें वोट देने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा। इन सभी बयानों के बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि यह क़दम आसामी मुसलमानों पर आने वाले तूफ़ान से पहले की प्रस्तावना

है। उन्हें अपने घरौंदे तूफ़ान की ज़द में नज़र आ रहे हैं, जिसकी रक्षा के लिये उन्हें जानतोड़ मेहनत तथा संघर्ष करना होगा।

इस बात से इनकार नहीं कि जो लोग ग़ैरक़ानूनी रूप से देश में रह रहे हैं, उन्हें उनके देश वापस भेजा जाए लेकिन इसके काम के लिये जितनी पारदर्शिता तथा निष्पक्षता की आवश्यकता है, अफ़सोस की वर्तमान सरकार उससे कोसों दूर है। यही कारण है कि सरकार के इस क़दम पर जहां लोग सड़कों पर निकल आए हैं, वहीं हालात गृहयुद्ध की ओर बढ़ रहे हैं, वहीं और ऐसे दर्जनों सवाल भी पैदा हो रहे हैं जिनका सरकार के पास कोई जवाब नहीं है।

सरकार का दावा है कि उसने एन.आर.सी की सूची जारी करके एक ज़बरदस्त कारनामा किया है। अतः बी. जे.पी. अध्यक्ष अमितशाह सदन में गर्व से यह कहा कि "माननीय राजीव गांधी ने इस मसले को उठाया था, उन्होंने इसकी शुरूआत की थी लेकिन कांग्रेस में हिम्मत नहीं थी। हममें हिम्मत है, अतः हमने इसको लागू कर दिया।" इन वाक्यों से इस गंभीर मुद्दे पर हो रही राजनीति का अनुमान लगाया जा सकता है।

सरकार ने जो सूची जारी की है वह किसी गड़बड़झाले से कम नहीं है। इसमें एक नहीं दसियों ग़लतियां भरी पड़ी हुईं हैं। कहीं पुरुष के नाम पर महिला की तस्वीर है, कहीं लिंग परिवर्तन है, कहीं नाम का पहला अक्षर तो कहीं आख़िरी व मध्य के अक्षर ग़ायब हैं। कहीं गांव तो कहीं ज़िला बदला हुआ है तथा स्पेलिंग की ग़लतियां तो पूछिये मत! अर्थात नाम व उपनाम, लिंग व आयु तथा परिवार व क्षेत्र सबकुछ गड़बड़ है। इस पर तमाशा यह कि एक ही घर के कुछ लोगों के नाम सूची में शामिल हैं तो कुछ के नाम ग़ायब हैं तथा एक संख्या ऐसी भी है जिसके पास आधार कार्ड या पासपोर्ट जैसे महत्वपूर्ण प्रमाण होने के बावजूद भी वे "बाहरी" घोषित कर दिये गये हैं।

अव्यवस्था तथा भ्रम की इन्तिहा तो उस समय हो गयी जब पूर्व राष्ट्रपति फ़ख़रुद्दीन अली अहमद के घरवालों का नाम सूची से बाहर कर दिया गया। तथा एक ऐसे व्यक्ति का नाम भी सूची में नहीं है जिसने 30 साल तक देश की सीमाओं की सुरक्षा की है।

यदि इन सारी ग़लतियों तथा कमियों को नज़रअंदाज़ करते हुए सरकारी की जारी की हुई सूची को स्वीकार भी कर लिया जाए तो भी यह सवाल बना हुआ है कि आख़िर चालिस लाख बंग्लादेशी देश में आए कैसे। कुछ लोगों का सीमा पार करके आना तो समझ में आता है तथा कुछ सालों में निशानदेही भी की जा सकती थी लेकिन लाखों लोगों का सरहद पार करना किसी भी तरह उचित बात नहीं है, या फिर सरकार किसी ऐसे दिन की निशानदेही करे जब उसने बंग्लादेशियों के लिये अपनी सीमाएं खोल दी हों! अब तक हमारे देश में पन्द्रह बार जनगणना हो चुकी है। क्या 1971 तथा फिर 1981 की जनगणना में इतनी बड़ी संख्या का पता ही नहीं चला। भारत सरकार जो एक–एक व्यक्ति की जानकारी रखने का दावा करती है उसकी निगाहों से चालिस लाख लोग ओझल कैसे हो गये? और अगर जानकारी थी तो उनके ख़िलाफ़ अब तक कोई कार्यवाही नहीं की गयी तथा मतदाता सूची में उनके नाम शामिल कैसे हुए, जैसा कि चुनाव आयोग ने कहा कि उनसे उनका मताधिकार नहीं छीना जाएगा?इस तरह के न जाने कितने सवाल है जो लोगों के दिमागों में उठ रहे होंगे लेकिन मुद्दे को हिन्दु–मुस्लिम रंग देकर उन सवालों को नफ़रत की क़ब्र में दफ़न कर दिया गया।

देश में संसदीय चुनाव एकदम नज़दीक हैं। राजनीतिक पार्टियां सरगर्म हैं। हिन्दु–मुस्लिम साम्प्रदायिक नफ़रत का माहौल तैयार किया जा रहा है। आए दिन भीड़तन्त्र द्वारा हिंसा की घटनाएं हो रही हैं। ऐसी स्थिति में इस रिपोर्ट का आना, बीजेपी नेताओं के बयान तथा प्रधानमंत्री की इन सब मुद्दों पर चुप्पी इस बात की ओर साफ़ इशारा कर रहे हैं कि आने वाले दिनों में आसाम के मुसलमानों का भविष्य और अधिक अन्धकारमय होने वाला है तथा केन्द्र की नाकाम सरकार 2019ई0 के संसदीय चुनाव में इस रिपोर्ट से फ़ायदा उठाने की भरपूर कोशिश करेगी। यदि वर्तमान सरकार अपने मक़सद में कामयाब हो जाती है और इस देश में मुसलमानों के सियासी क़त्ल का सिलसिला शुरू हो जाता है तो फिर इस देश को गृहयुद्ध की आग में कूदने से कोई ताक़त रोक नहीं सकती तथा यह देश के हर वर्ग के लिये तबाही का कारण होगा।

दरूद व सलाम

एक के बदले दस

यह कितना बड़ा एहसान है कि एक बार दरूद शरीफ़ पढ़ने से दस गुना सवाब मिलता है। हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया:

"जो शख़्स मुझपर एक बार दरूद शरीफ़ पढ़ता है, अल्लाह तआला उस पर दस मर्तबा सलामती भेजते हैं।"

जन्नत में रसूलुल्लाह (स०अ०) से क़रीब होना

एक मुसलमान के लिये इससे बढ़कर क्या नेमत हो सकती है कि जन्नत नसीब हो और फिर जन्नत में सरकार–ए–दो आलम (स०अ०) की क़ुरबत (निकटता) मिले, तो हर मुसलमान की तमन्ना और आरज़ू होगी। लीजिए इसका नुस्ख़ा भी मालूम कर लीजिए:

हज़रत इब्ने मसऊद (रज़ि०) रिवायत करते हैं कि हुज़ूर (स०अ०) ने इरशाद फ़रमाया, बिला शक क़यामत में लोगों में से सबसे ज़्यादा मुझसे क़रीब वह शख़्स होगा जो सबसे ज़्यादा मुझ पर दरूद भेजे।

ज़ुल्म व ज़्यादती

यह कितने ज़ुल्म व ज़्यादती, बेमुरव्वती और एहसान फ़रामोशी की बात है कि हुज़ूर (स०अ०) के नाम नामी को सुनकर भी कोई दरूद न पढ़े। उससे बढ़कर कोई बख़ील (कंजूस) और नामुराद नहीं हो सकता। ख़ुद रसूलुल्लाह (स०अ०) ने इरशाद फ़रमाया:

"यह बात ज़ुल्म की है कि किसी आदमी के सामने मेरा ज़िक्र किया जाए और वह मुझपर दरूद न भेजे।"

बख़ील (कंजूस) कौन है?

हज़रत अली (रज़ि०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स०अ०) ने फ़रमाया:

"बख़ील वह है जिसके सामने मेरा ज़िक्र किया जाए और वह मुझपर दरूद न भेजे।"

सबसे बेहतर दरूद

हुज़ूर (स०अ०) से बहुत से दरूद के अल्फ़ाज़ साबित हैं और उन सबके बड़े सवाब और अच्छे नताएज बरामद होते हैं। कुछ दरूद छोटे हैं, कुछ लम्बे, कुछ दरमियानी। उन सबके फ़ज़ाएल आये हैं। जिनका ज़िक्र इस वक़्त मुमकिन नहीं है लेकिन दरूदों में ज़्यादा फ़ज़ीलत वाला दरूद शरीफ़ वह है जो नमाज़ में अत्तहियात के बाद हर नमाज़ी पढ़ता है, जिसको "दरूद–ए–इब्राहीमी" कहा जाता है।

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 09 SEPTEMBER 2018 VOLUME: 10

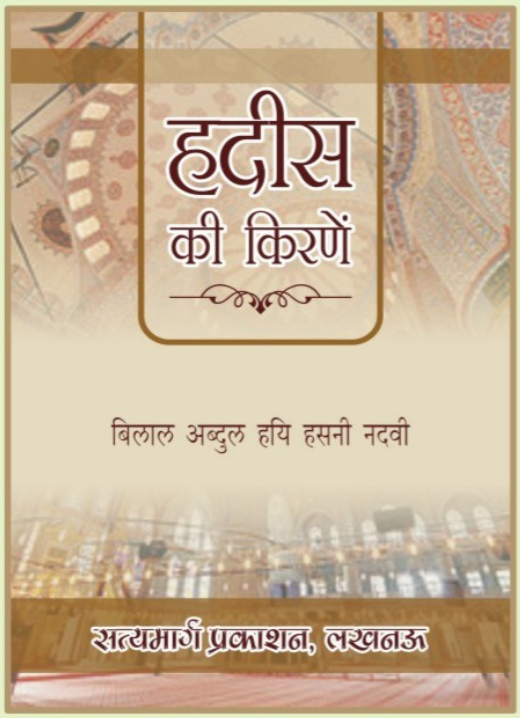

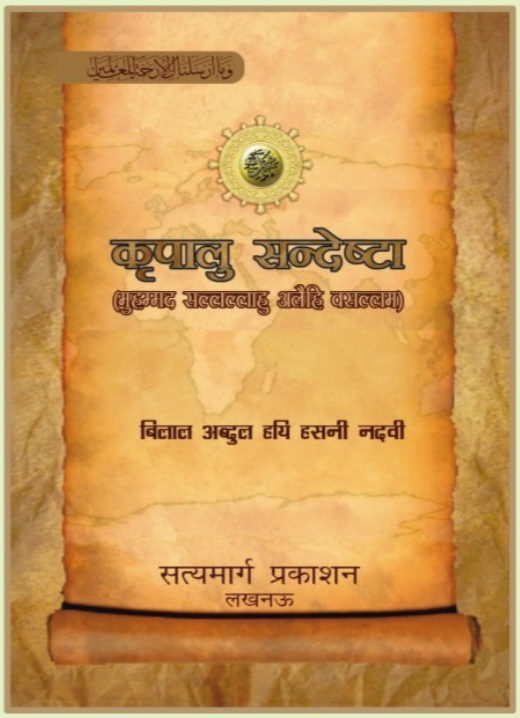

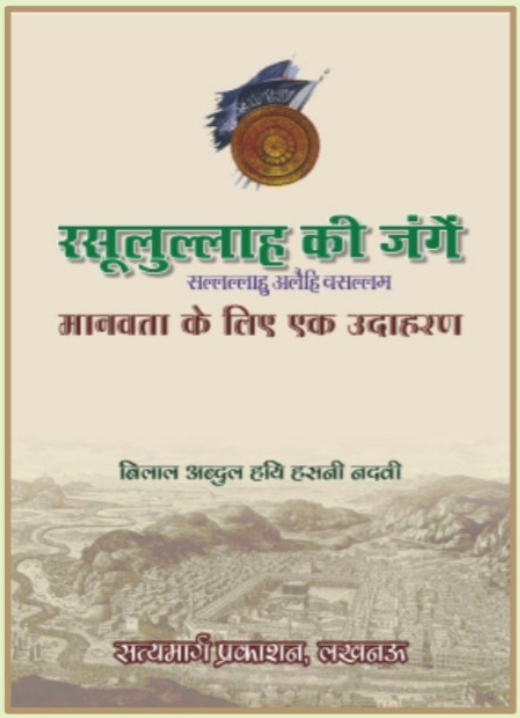

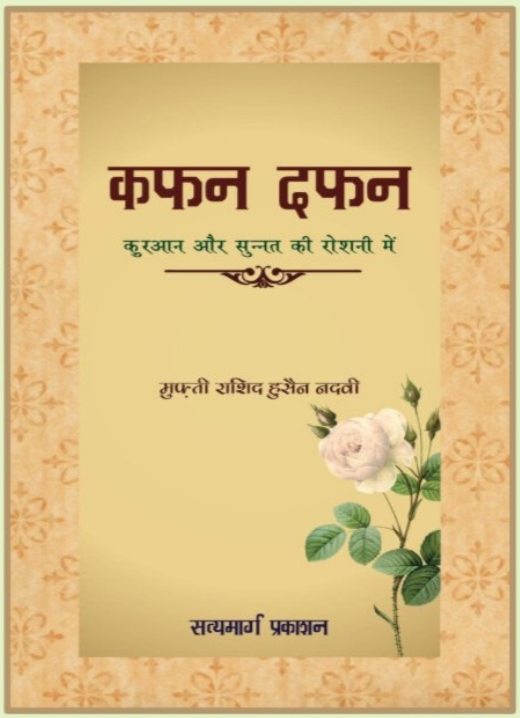

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.